टॉकिंग टू वर्कर्स

वर्कर्स केंप, लोनावला
प्रवचनः 1, दिनांक 23 दिसंबर, 1969

मेरे प्रिय आत्मन्

कुछ बहुत जरूरी बातों पर विचार करने को हम यहां इकट्ठा हुए हैं। मेरे खयाल में नहीं थी यह बात कि जो मैं कह रहा हूं, एक-एक व्यक्ति से उसके प्रचार की भी कभी कोई जरूरत पड़ेगी। इस संबंध में कभी सोचा भी नहीं था। मुझे जो आनंदपूर्ण प्रतीत होता है और लगता है कि किसी के काम आ सकेगा, वह मैं इन लोगों से...। अब मेरी जितनी सामर्थ्य और शक्ति है उतना कहता हूं। लेकिन जैसे-जैसे मुझे ज्ञात हुआ और सैकड़ों लोगों के संपर्क में आने का मौका मिला तो मुझे यह दिखाई पड़ना शुरू हुआ की मेरी सीमाएं हैं। और मैं कितना ही चाहूं तो भी उन सारे लोगों तक अपनी बात नहीं पहुंचा सकता हूं जिनको उसकी जरूरत है। और जरूरत बहुत है और बहुत लोगों को है। पूरा देश ही, पूरी पृथ्वी ही कुछ बातों के लिए अत्यंत गहरे रूप से प्यासी और पीड़ित है।

पूरी पृथ्वी को छोड़ भी दें तो इस देश में भी एक आध्यात्मिक संकट की, एक स्प्रीचुअल क्राइसिस की स्थिति है। पुराने सारे मूल्य खंडित हो गए हैं। पुराने सारे मूल्यों का आदर और सम्मान विलीन हो गया है। नए किसी मूल्य की कोई स्थापना नहीं हो सकी। आदमी बिलकुल ऐसे खड़ा है जैसे उसे पता ही न हो वह कहां जाए और क्या करे। ऐसी स्थिति में स्वाभाविक है कि मनुष्य का मन बहुत अशांत, बहुत पीड़ित, बहुत दुखी हो जाए।

एक-एक आदमी के पास इतना दुख है कि काश हम खोलकर देख सकें उसके हृदय को तो हम घबरा जाएंगे। जितने लोगों से मेरा संपर्क हुआ है, उतना ही मैं हैरान हुआ आदमी जैसा ऊपर से दिखाई पड़ता है, उससे ठीक उलटा उसके भीतर है। उसकी मुस्कुराहटें झूठी हैं, उसकी खुशी झूठी है, उसके मनोरंजन झूठे हैं, और उसके भीतर बहुत गहरा नर्क, बहुत अंधेरा, बहुत दुख और पीड़ा भरी है। इस पीड़ा को, इस दुख को मिटाने के रास्ते हैं, इससे मुक्त हुआ जा सकता है।

आदमी का जीवन एक स्वर्ग की शांति का और संगीत का जीवन बन सकता है। और जब से मुझे ऐसा लगना शुरू हुआ तो ऐसा प्रतीत हुआ कि जो बात मनुष्य के जीवन को शांति की दिशा में ले जा सकती है, अगर उसे हम उन लोगों तक नहीं पहुंचा देते जिन्हें उसकी जरूरत है तो हम एक तरह के अपराधी हैं। हम भी जाने-अनजाने कोई पाप कर रहे हैं। मुझे लगने लगा कि अधिकतम लोगों तक कोई बात उनके जीवन को बदल सकती हो तो उसे पहुंचा देना जरूरी है। लेकिन मेरी सीमाएं हैं, मेरी सामर्थ्य है, मेरी शक्ति है, उसके बाहर वह नहीं किया जा सकता। मैं अकेला जितना दौड़ सकता हूं, जितने लोगों तक पहुंच सकता हूं, वे चाहे कितने ही अधिक हों फिर भी इस वृहत् जीवन और समाज को और इसके गहरे दुखों को देखते हुए उनका कोई भी परिमाण नहीं है।

एक समुद्र के किनारे हम छोटा-मोटा रंग घोल दें, कोई एकाध छोटी-मोटी लहर रंगीन हो जाए, इससे समुद्र के जीवन में कोई फर्क नहीं पड़ सकता है। और बड़ा मजा यह है कि वह एक छोटी-सी जो लहर थोड़ी-सी रंगीन भी हो जाएगी, वह भी उस बड़े समुद्र में थोड़ी देर में खो जाने को है। उसका रंग भी खो जाने को है। तो कैसे जीवन के इस बड़े सागर में दूर-दूर तक शांति के रंग फेंके जा सकें, उस संबंध में ही विचार करने को हम यहां इकट्ठा हुए हैं। इसके साथ ही यह भी मुझे दिखाई पड़ता है कि जो आदमी केवल अपनी ही शांति में उत्सुक हो जाता है, वह आदमी कभी पूरे अर्थों में शांत नहीं हो सकता है। क्योंकि अशांत होने का एक कारण यह भी है, केवल अपने आप में ही उत्सुक होना, मात्र अपने में ही उत्सुक होना, सेल्फ सेंटर्ड होना भी अशांति के बुनियादी कारणों में से एक है।

जो आदमी सिर्फ खुद में ही उत्सुक हो जाता है, सिर्फ स्वयं में ही उत्सुक हो जाता है, और चारों तरफ से आंख बंद कर लेना चाहता है वह आदमी वैसा ही है, जैसे कोई एक आदमी एक खूबसूरत सुंदर घर बनाए और इसकी फिकर ही न करे कि उसके घर के चारों तरफ गंदगी के ढेर लगे हुए हैं; वह अपने घर में एक बगिया लगा ले और इसकी फिकर ही न करे कि चारों तरफ दुगध इकट्ठी हो गई है। उसकी बगिया, उसके फूल, उसकी सुगंध बहुत काम नहीं आएंगे अगर चारों तरफ का सारा पड़ोस गंदा है। तो वह गंदगी उसके घर में प्रवेश करेगी उसके फूलों की सुगंध को भी डुबा देगी।

टॉकिंग टू वर्कर्स

मनुष्य को न केवल अपने में बल्कि अपने पड़ोस में भी उत्सुक होना जरूरी है। धार्मिक व्यक्ति मात्र अपने में ही उत्सुक नहीं होता, बल्कि शेष सारे जीवन के प्रति भी आतुर होता है। यह भी मुझे प्रतीत होता है कि हम अपनी ही शांति के लिए उत्सुक हों यह पर्याप्त नहीं है। हमारे चारों तरफ जो जीवन है, जिससे हम अंतर-संबंधित हैं, जिससे हम जुड़े हैं उस जीवन में भी शांति की कोई हवाएं पहुंच सकें, इसके लिए भी हमारी उत्सुकता जरूरी है। और जो व्यक्ति अपने चारों तरफ के जीवन को भी शांति की दिशा में ले जाने के लिए प्यासा हो जाएगा, वह पाएगा की चाहे वह दूसरों को शांत कर पाया हो या न कर पाया हो, लेकिन दूसरों को शांत करने के महत्वपूर्ण प्रयास में वह स्वयं जरूर ही शांत हुआ है।

बुद्ध के जीवन में उल्लेख है, शायद काल्पनिक ही कथा होगी लेकिन बहुत मधुर है। बुद्ध का निर्वाण हुआ, वे मोक्ष के द्वार पर पहुंच गए, द्वारपाल ने द्वार खोल दिए, लेकिन बुद्ध पीठ करके द्वार की तरफ खड़े हो गए। द्वारपाल ने पूछा, आप पीठ करते हैं मोक्ष की तरफ! बुद्ध ने कहा, मेरे पीछे बहुत लोग है, जब तक वे भी मोक्ष में प्रविष्ट नहीं हो जाते, तब तक मैं अकेला मोक्ष में प्रविष्ट हो जाऊं? इतना कठोर, इतना क्रूर, इतना हिंसक मैं नहीं हूं। मैं रुकूंगा, प्रतीक्षा करूंगा, बहुत लोग हैं। मेरा शांत मन तो यह कहता है कि मैं अंतिम आदमी ही होऊंगा मोक्ष में प्रवेश करने वाला। पहले सारे लोग प्रविष्ट हो जाएं। बड़ी मीठी कथा है। वह कथा कहती है बुद्ध अब भी मोक्ष के द्वार पर ही रुके हैं, ताकि सारे लोग मोक्ष में प्रविष्ट हो जाएं। वे अंतिम ही प्रविष्ट होना चाहते हैं।

जिस हृदय में ऐसा भाव उठा हो, उसे मोक्ष उपलब्ध ही हो गया, उसे किसी मोक्ष में प्रविष्ट होने की कोई जरूरत नहीं है। उसके लिए सब मोक्ष फीके हो गए। वह मोक्ष में पहुंच ही गया, जिसके हृदय में ऐसा करुणा का भाव उठा हो। शांत केवल वे ही हो पाते हैं जिनके जीवन में चारों तरफ शांति पहुंचाने की प्रबल प्रेरणा काम करने लगती है। यह भी मेरे खयाल में आता है कि जो मित्र इस दिशा में उत्सुक हुए हैं वे केवल अपने में ही उत्सुक न हों; और सबमें भी उत्सुक हो जाएं। उनकी यह उत्सुकता दूसरों के लिए हितकर होगी ही, न भी हुई तो भी उनके स्वयं के लिए बहुत अर्थपूर्ण होगी, बहुत-बहुत गहरी शांति में और आनंद में उन्हें प्रविष्ट करने में सहयोगी होगी। क्योंकि अशांति का एक कारण है स्वयं में केंद्रित हो जाना। और जो इस केंद्र को बिखेर देता है वह शांत होने की दिशा में गतिशील हो जाता है।

तो यह बात कहने के लिए, इस बात के संबंध में विचार करने के लिए हम यहां इकट्ठे हुए हैं कि मैं आपसे यह कह सकूं कि किन रास्तों से अधिकतम लोगों तक प्रेम की, शांति की और करुणा की बात पहुंचाई जा सकती है। क्या उपाय खोजें कि वह बात पहुंच सके, क्या रास्ता हो सकता है। यह कोई प्रपोगेंडा नहीं है, यह कोई संप्रदाय खड़ा करना नहीं है, यह कोई आर्गेनाइजेशन, कोई संगठन खड़ा करना नहीं है। कोई ऐसा केंद्र खड़ा नहीं करना है जो शक्तिशाली हो जाए। बल्कि इस भांति सब तक कोई बात पहुंचा देनी है, बिना संगठन के, बिना संप्रदाय के, बिना आर्गेनाइजेशन के, बिना किसी केंद्रित शक्ति को बनाए हुए। और इसलिए बहुत विचार करने की जरूरत है। अगर एक संप्रदाय बनाना हो तो बहुत विचार करने की जरूरत नहीं रह जाती। अगर एक संगठन खड़ा करना हो तो कोई बहुत विचार करने की जरूरत नहीं रह जाती।

दुनिया में संगठन बनाने के नियम सबको पता है, संप्रदाय खड़े करने की तरकीबें सबको पता हैं। हजारों संप्रदाय खड़े हो चुके हैं। उन संप्रदायों में एक संप्रदाय खड़ा नहीं कर देना है। इसलिए बहुत विचार करने की जरूरत है कि संप्रदाय भी खड़ा न हो, कोई संगठन भी खड़ा न हो। और जो बात हमें प्रीतिकर लगे, आनंदपूर्ण लगे उस बात को हम सब तक पहुंचा भी सकें। प्रपोगेंडिस्ट भी हम न हों और प्रचार भी हम कर सकें, इसलिए बहुत डेलिकेट, बहुत महीन और बहुत सूक्ष्मता से विचार करने की जरूरत है। खाई और कुएं के बीच चलने जैसा है।

एक तो यह है कि हम कोई प्रचार ही न करें क्योंकि खतरा है, संप्रदाय न बन जाए। इसका मतलब है कि हम बात ही न पहुंचाए किसी तक? दूसरा यह है कि हम बात पहुंचाएं तो संप्रदाय बना लें, वह भी खतरा है। बात तो पहुंचानी है सब तक लेकिन संप्रदाय न बन पाए यह ध्यान रखना अत्यंत जरूरी है। तो कैसे यह बात बिना प्रचार के प्रचार हो सके, बिना संप्रदाय के, बिना संगठन के अधिकतम लोगों तक जो जरूरी है वह खबर, वह सूचना, वह संदेश उन तक पहुंचाया जा सके।

इस संबंध में विचार करने को यहां आपको आमंत्रित किया है। मुझे कुछ जो बातें दिखाई पड़ती हैं वे इन आने वाली बैठकों में मैं आपसे धीरे-धीरे कहूंगा और आपसे भी आशा करूंगा की आप सोचेंगे इस दिशा में। कुछ बातें प्राथमिक रूप से मैं आज आप से कहूंगा, जिनसे आप विचार कर सकें।

पहली बात, जितना बड़ा संदेश है उतना बड़ा हमारे पास आज मित्रों का कोई समूह नहीं है। संगठन चाहिए भी नहीं, सिर्फ समूह चाहिए, और समूह और संगठन का फर्क खयाल में होना चाहिए। समूह का मतलब होता है, प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र है वहां। अपनी आजादी से आया है और अपनी आजादी से अलग हो सकता है। समूह का मतलब है प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के बराबर है, कोई नीचा और कोई ऊपर नहीं है। कोई पदाधिकारी नहीं है, कोई अनुयायी नहीं है, कोई नेता नहीं है। समूह का अर्थ है—मित्रों का एक समूह बनाना है, एक संगठन नहीं क्योंकि संगठन में फिर पदाधिकारी होते हैं। ऊपर-नीचे आदमी होते हैं, और संगठन का अपना एक जाल होता है। एक हायरारिकी होती है, नीचे से ऊपर तक सीढ़ियां और पद होते हैं। और फिर उनके साथ आई हुई पालिटिक्स होती है, राजनीति होती है, क्योंकि जहां पद है वहां राजनीति आनी अनिवार्य है। जो पदों पर होते हैं वे भयभीत हो जाते हैं कि उन्हें कोई पदों से अलग न कर दें। जो पद पर नहीं होते वह उत्सुक होते हैं कि हम पद पर कैसे पहुंच जाएं। तो एक अपना उपद्रव है संगठन का।

हमें एक मित्रों का समूह बनाना है। कोई संगठन नहीं बनाना है। समूह में प्रत्येक व्यक्ति बराबर है समान मूल्य का है। कोई पदाधिकारी नहीं है, कोई आदृत नहीं है। कोई नीचा नहीं कोई ऊंचा नहीं है, और प्रत्येक व्यक्ति सिर्फ अपने प्रेम के कारण वहां आया है। प्रेम के अतिरिक्त उसके ऊपर न कोई आदेश हैं जिन्हें उसे मानना है, न कोई प्रतिज्ञाएं हैं जिन्हें उसे पूरी करना है। न कोई व्रत नियम हैं जिनके अंतर्गत उसे बंधना है। सिर्फ उसका प्रेम और उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता से सम्मिलित हुआ है वह और जिस क्षण चाहे उसी क्षण अलग हो जा सकता है। और जब वह सम्मिलित भी है तब भी वह किसी एक डाग्मा, किसी एक सिद्धांत से बंधा हुआ नहीं है। तब भी वह स्वतंत्र है, भिन्न मत रखने को, अपने विचार रखने को, अपने विचार को मानने को, अपनी बुद्धि का अनुसरण करने को। वह किसी का अनुयायी होकर वहां नहीं है।

तो मित्रों का एक समूह जीवन जागृति केंद्र बन सके, इस दिशा में सोचना है। निश्चित ही मित्रों के समूह बनाने के नियम अलग होते हैं, संगठन बनाने के नियम अलग होते हैं। मित्रों का समूह एक बिलकुल ही जिसको हम कहें अराजक, अनार्किक संस्था होती है। संगठन एक सुव्यवस्थित, बंधी हुआ नियमों से, सिद्धांतों से, कानूनों से बंधी हुई व्यवस्था होती है।

मेरी कोई मर्जी बहुत, कानूनों में, नियमों में, सिद्धांतों में बांधने की नहीं है, क्योंकि उन्हीं सबके खिलाफ मैं लड़ रहा हूं। उन्हीं सब के तो संगठन सारी दुनिया में खड़े हुए हैं। हम एक और संगठन वैसा खड़ा कर दें?

निश्चित ही संगठन में ज्यादा इफिशिएंसि होती है, ज्यादा कुशलता होती है। उतनी समूह में कुशलता नहीं हो सकती। लेकिन कुशलता के मूल्य पर स्वतंत्रता खोना बहुत कीमती सौदा करना है। लोकतंत्र उतना कुशल नहीं होता जितनी तानाशाही होती है। लेकिन कुशलता को खोया जा सकता है, स्वतंत्रता को नहीं खोया जा सकता।

मित्रों के समूह का अर्थ है कि यह स्वतंत्र व्यक्तियों का मिलन है—उनकी स्वेच्छा से। इसमें जो भी कोई छोटी-मोटी कानून और व्यवस्थाएं होंगी, तो वे भी व्यक्तियों से नीचे होंगी उनके ऊपर नहीं हो सकतीं। वे कामचलाऊ होंगी। वे हमारा लक्ष्य नहीं हो सकती हैं। हम उन्हें किसी भी क्षण तोड़ने के लिए हमेशा स्वतंत्र हैं। वे किसी भी क्षण हमें तोड़ने में समर्थ नहीं हो सकतीं। वे कानून भी होंगे तो वे हमारे लिए होंगे, हम कानून के लिए नहीं हो सकते, यह ध्यान में रख लेना जरूरी है।

अब मित्र सोचते हैं कोई विधान हो, निश्चित ही कोई विधान होना चाहिए, लेकिन जैसे विधान होते हैं संगठनों के वैसे नहीं। यह ध्यान में रखकर ही विधान होना चाहिए कि मित्रों के एक समूह का विधान है जो अत्यंत काम चलाऊ है। उसका उपयोग है इसलिए उसको बना लिया है। लेकिन उससे बंधने का कोई हमारा आग्रह नहीं है। उसे हम किसी भी क्षण फेंक सकते हैं और जला सकते हैं। और विधान चाहे कितना भी कीमती हो, उस विधान से हमारा एक-एक मित्र ज्यादा कीमती है यह ध्यान में होना जरूरी है। क्योंकि इन्हीं मित्रों के लिए वह विधान बनाया गया है, उस विधान के लिए ये मित्र इकट्ठे नहीं

किए गए हैं। इसलिए एक-एक व्यक्ति का मूल्य और एक-एक व्यक्ति की गरिमा शेष रह सके, ऐसा एक समूह खड़ा करना है।

निश्चित ही जितने अधिक व्यक्ति होंगे उतने भिन्न चित्त, उतने भिन्न विचार, उतने भिन्न उनके सोचने-समझने के ढंग होंगे। जितना बड़ा समूह होगा मित्रों का उतनी ही विभिन्नता स्वाभाविक है। इसलिए एकरूपता पैदा करने की बहुत चेष्टा हमें नहीं करनी चाहिए अन्यथा फिर संगठन खड़ा होना शुरू हो जाता है। और एकरूपता की जितनी हम कोशिश करते हैं उतना ही व्यक्तित्व, उसकी गरिमा, उसकी स्वतंत्रता सब नष्ट होना शुरू हो जाती है। एकरूपता की बहुत चिंता नहीं बल्कि सब मित्रों के प्रति सम्मान, उनके भिन्न विचारों के प्रति भी, क्योंकि मेरी सारी दृष्टि यही है कि सारे मुल्क में स्वतंत्र चिंतन पैदा हो सके। तो स्वतंत्र चिंतन जो लोग पैदा करना चाहते हैं, अगर वे भीतर ही परतंत्र चिंतन से बंध जाएंगे तो खतरा होगा।

इसलिए मेरे प्रति भी इन मित्रों के समूह की कोई श्रद्धा नहीं होनी चाहिए। मेरे प्रति भी कोई श्रद्धा का भाव नहीं होना चाहिए। मेरे प्रति भी विचार का और विवेक का भाव होना चाहिए। मैं जो कहता हूं वह ठीक लगता हो, प्रीतिकर मालूम होता हो, उपयोगी मालूम होता हो तो उसे लोगों तक पहुंचा देना है। मैं कहता हूं इसलिए पहुंचा देना है ऐसी भूल में नहीं पड़ जाना चाहिए। व्यक्ति के केंद्र पर भी मित्रों का समूह निर्भर नहीं होना चाहिए कि एक व्यक्ति पूजा का केंद्र बन जाए—मैं या कोई भी दूसरा। न हमारी कोई पूजा है, न हम किसी के अनुयायी हैं, न हमारा कोई नेता है। हमें तो सामूहिक रूप से एक विचार, एक संदेश प्रीतिकर लगता है, ऐसा लगता है कि अधिकतम लोगों तक पहुंचा दिया जाए तो उनका मंगल होगा। इसलिए हम मित्र इकट्ठे हुए हैं और उसको पहुंचा देना चाहते हैं।

तो पहली बात यह है कि संगठन के संबंध में थोड़ा विचार करेंगे। संगठन हमें नहीं बनाना है, एक मित्रों का समूह भर बनाना है, और इन दोनों के बीच जो बारीक भेद है, वह समझने की कोशिश करेंगे। और हर एक मित्र का यह कर्तव्य होगा कि वह संगठन बनने से बचा सके इस संस्था को।

यह मेरे अकेले के हाथ में नहीं है। मैं कह सकता हूं, लेकिन यह मेरे अकेले के हाथ में नहीं है। और बहुत सजग हम न रहे तो यह खतरा है कि यह संगठन बन जाए! बहुत सजग रहने की जरूरत है और बहुत होश से प्रयोग करने की जरूरत है कि संगठन न बन जाए! संप्रदाय बनने के कुछ अनजाने रास्ते होते हैं, पता भी नहीं चलता और वह बनना शुरू हो जाता है। तो उस पर ध्यान रखने की जरूरत है। और पूर्व से हम सचेत रहे तो शायद हम वैसी व्यवस्था कर सकें कि वह न बन पाए, एक तो यह विकल्प है।

दूसरा विकल्प यह है कि इस बात से अगर हम डर जाएं कि संगठन न बन जाए, संप्रदाय न बन जाए, इसलिए कुछ करना ही नहीं है तो दूसरा खतरा शुरू हो जाता है। फिर कुछ करना नहीं है तो जो बात पहुंचानी है उसे पहुंचाना असंभव। तब फिर वह मेरे अकेले कंधों पर रह जाती है बात कि मैं जितना दौड़ सकूं उतने लोगों तक पहुंचा दूं। वह मैं करता रहूंगा। उससे कोई फर्क नहीं पड़ता है, लेकिन वही बात बहुत लोगों तक पहुंच सकती है। जितने अधिक मित्रों का सहयोग होगा उतने दूर तक पहुंच सकती है, उतनी ही सरलता से पहुंच सकती है।

और आज इतनी सुविधाएं उपलब्ध की हैं विज्ञान ने, समाज की प्रगति ने कि हम नासमझ होंगे कि उनका उपयोग न कर सकें। हम गलती में होंगे अगर उनका उपयोग हम न कर सकें। अब जैसे मैं यहां बोल रहा हूं, माइक हम न लगाएं तो भी काम चलेगा, मैं बोलूंगा तो भी शायद आप तक बात पहुंचेगी लेकिन शायद इतने ठीक से नहीं पहुंच पाएगी। अभी थोड़े हैं तो पहुंच भी जाए, ज्यादा भीड़ होगी तो नहीं पहुंच पाएगी। माइक का उपयोग हम कर रहे हैं तो वह दूर तक पहुंच रही है।

आज तो इतने साधन उपलब्ध हुए हैं कि उन सबका उपयोग किया जाए तो एक व्यक्ति जीवन में उतना काम कर सकता है, जितना बुद्ध या महावीर पच्चीस जीवन में भी करना चाहते तो भी नहीं कर सकते थे। बुद्ध और महावीर की मजबूरी थी, जो उनके पास उपलब्ध थे साधन उनका उपयोग करके जितना उन्होंने श्रम किया वह बहुत है। लेकिन अगर वैसा ही श्रम आज के जमाने में किसी से करवाया जाए तो निपट नासमझी होगी।

आज तो बहुत साधन सुलभ हैं, उन सबका उपयोग हो सकता है और एक आदमी जीवन में इतना काम कर सकता है कि जिसके लिए अगर वह चार सौ साल जीए और बिना साधन के मेहनत करे तो भी नहीं कर पाएगा। तो उन सारे साधनों का

हम उपयोग कर सकें इसके लिए विचार करना जरूरी है। यह मेरे अकेले के वश की बात नहीं है। उसके लिए बहुत मित्रों की जरूरत है, बहुत प्रकार के मित्रों की जरूरत है। कोई श्रम कर सकता है, कोई बुद्धि से विचार कर सकता है, कोई धन की व्यवस्था कर सकता है, कोई और तरह सं...। जो जिसकी सूझ, जो जिसका व्यक्तित्व है उस तरह से सहयोगी हो सकता है।

यह भी ध्यान में रखना जरूरी है कि मित्रों का वर्ग जितना बड़ा हो उतना अच्छा है। क्योंकि उतने ही अधिक तरह के, भिन्न तरह के लोग आएंगे, भिन्न तरह का अनुदान कर सकेंगे। भिन्न तरह की सेवाएं, भिन्न तरह का उनका सहयोग काम को और ज्यादा समृद्ध बना सकेंगे।

अक्सर यह होता है कि मित्रों की सीमाएं तय हो जाती हैं। अपरिचित लोगों से एक भय होता है मन में। स्ट्रेंजर से थोड़ा भय होता है कि पता नहीं यह क्या गड़बड़ करेगा भीतर आने पर। तो आमतौर से यह हो जाता है कि दस-पच्चीस मित्र जब कहीं इकट्ठे हो जाते हैं तो वह एक घेरा बना लेते हैं, तो फिर नए लोगों के भीतर आने में उनको थोड़ा डर होने लगता है। यह डर होता है कि कहीं यह नया आदमी कोई गड़बड़ न कर दे, यह डर तो स्वाभाविक है। यह कामना और भावना भी अच्छी है कि नया आदमी कोई गड़बड़ न कर दे। लेकिन एक नए आदमी से पच्चीस पुराने आदमियों का डरना बड़ी कमजोरी की बात है। सोचना यह चाहिए कि एक नए आदमी को हम पच्चीस बदलने की कोशिश करेंगे या एक नया आदमी हम पच्चीस को बदल देगा! और अगर हम पच्चीस इतने कमजोर हैं कि एक नया आदमी बदल देगा तो बदल ही देना चाहिए, इसमें हर्ज भी क्या है! इसमें बुराई भी क्या है!

हमेशा यह होता है कि जब भी कोई वर्ग इकट्ठे होना शुरू होते हैं तो एक दायरा बन जाता है। फिर उस दायरे के बाहर के आदमी और उनके बीच में एक फासला हो जाता है। अनजाने होता है, कोई जानकर नहीं करता है, यह मन के स्वाभाविक नियम हैं। अगर आप किसी अजनबी गांव में चले जाएं और आपके साथ दो-चार मित्र वहां हों तो शायद आप उस अजनबी गांव में मित्र नहीं बनाएंगे। वह दो-चार मित्रों के घेरे में ही आप घिरे रह जाएंगे और उसके बाहर नहीं निकलेंगे। मजबूरी आ जाए कि आप अकेले पड़ जाएं तो बात दूसरी है कि शायद आपको मित्र बनाना पड़ें, नहीं तो आप मित्र नहीं बनाएंगे।

तो हर समूह सीमित होने की प्रवृत्ति से भरा रहता है। एक टेंडेंसी होती है कि वह सीमित हो जाता है और सीमा में एक तरह की सुरक्षा, सिक्योरिटी मालूम होती है—सब परिचित हैं, सब ठीक है; जो हम को पसंद है वह सबको पसंद है।

कोई अजनबी आदमी भीतर आए, नई बातें कहे, कोई उपद्रव करे, इसका भय छोड़ देना चाहिए। अगर काम को व्यापक और विराट बनाना हो तो इस बात का भय छोड़ देना चाहिए। फिक्र इस बात की करनी चाहिए कि हम इतने एकोमोडेटिंग हो, हमारा हृदय इतना विस्तीर्ण हो, बाहें हमारी इतनी दूर तक फैलती हों कि विपरीत से विपरीत व्यक्ति को भी हम धीरे-धीरे समायुक्त कर लेंगे। छोड़ेंगे हम एक को भी नहीं। जो हमसे बिलकुल भिन्न है, उसकी भी हम अपने भीतर जगह बना लेंगे, उसकी उपयोगिता भी खोज लेंगे कि वह हमारे किस काम में आ सके।

गांधीजी ने इस संबंध का बड़ा प्रयोग इस मुल्क में किया। हिंदुस्तान के कितने विरोधी और भिन्न लोगों को उन्होंने एक साथ इकट्ठा कर लिया। एकदम भिन्न लोगों को, जिनके बीच आपस में कोई मतैक्य नहीं हो सकता था, वे लोग भी एक घेरे में भीतर आ गए और किसी विराट कार्य के लिए सहयोगी बन गए। अगर कोई यह सोचे कि भिन्न मत के, भिन्न दृष्टि के, भिन्न व्यक्तित्व के लोग भीतर न आएं तो फिर काम बड़ा नहीं हो सकता, बहुत छोटा रह जाएगा। कोई छोटी सी नदी छोटी ही रह जाएगी अगर वह यह सोचे की हर दूर से आनेवाला नाला और नदी मुझसे न मिले; पता नहीं किस कीचड़ को ले आए, कौन-से द्रव्य ले आए, कौन-से खनिज ले आए। अच्छा पानी हो कि बुरा हो। अगर ऐसा कोई नदी सोचने लगे तो फिर वह नाली रह जाएगी फिर वह महानदी नहीं बन सकती फिर वह गंगा नहीं बन सकती। और गंगा बनना हो तो उसे सबको समाविष्ट कर ही लेना होगा। और यह सामर्थ्य होनी चाहिए कि सब समाविष्ट हो जाएं, इस संबंध में विचार करना जरूरी है कि हम अधिकतम लोगों को कैसे समाविष्ट कर सकें। हमें जगह बनानी पड़ेगी, भिन्न-भिन्न लोगों को कैसे हम भीतर प्रवेश दे सकें, कैसे उनके लिए काम खोज सकें, कैसे वह भी सहयोगी बन जाएं।

अब मुझे मुल्क में न मालूम कितने लोग आकर कहते हैं कि हम काम में सहयोगी बनना चाहते हैं। न मालूम कितने लोग पत्र लिखते हैं कि हमें कोई काम बताइए, हम काम में सहयोगी बनना चाहते हैं। वह आपका जुम्मा है कि आप इन सारे मित्रों का उपयोग ले लें और यह तो भूलें, भूल ही जाएं, यह खयाल कि कोई आदमी ऐसा हो सकता है जो किसी काम में ही न आ सके। ऐसा आदमी जमीन पर होता ही नहीं। आदमी तो बहुत दूर हैं, पशु-पक्षी भी सहारे बन जाते हैं, उनका सहारा भी काम बन सकता है। ऐसा तो कोई आदमी है ही नहीं जो किसी न किसी काम का न हो। निकम्मा कोई भी आदमी पृथ्वी पर नहीं है जिससे कुछ काम न लिया जा सके! तो कोई भी आदमी उत्सुक होता हो, हम उससे क्या काम ले सकते हैं इसकी हम फिक्र करें। अगर हम इस बात की फिक्र करें कि वह आदमी ऐसा है, वह आदमी वैसा है तो फिर बहुत मुश्किल है। फिर हम अगर जांच-जांचकर आदमियों का निर्णय करने बैठेंगे...। एक तो हम निर्णायक हो नहीं सकते किसी के और अगर हम निर्णय करने बैठेंगे तो इसमें काम को कितना धक्का पहुंचेगा इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

गांधीजी के आश्रम में एक आदमी आता था और लोगों ने शिकायत की कि यह आदमी बहुत बुरा है, शराब पीता है, फलां करता है, ढिकां करता है। गांधी सुनते रहे, मित्र बहुत परेशान हो गए कि यह गांधी उसको मना नहीं करते हैं, उसको निकट लेते चले जा रहे हैं। और वह आदमी धीरे-धीरे अकड़कर आश्रम में प्रविष्ट होता है उसका भय भी विलीन हो गया है।

एक दिन आखिर लोगों ने आकर कहा—गांधीजी के बहुत निकट के लोगों ने—कि बहुत हद हो गई यह बात, आज हमने उस आदमी को शराबखाने में अपनी आंखों से बैठे देखा है और आपके खादी के कपड़े पहने हुए वह वहां शराब पीए, बहुत बदनामी की बात है, ऐसे आदमी का आश्रम में आना बहुत बुरा है, इससे आश्रम बदनाम होगा। गांधी ने कहा हम ने आश्रम खोला किसके लिए! अच्छे लोगों के लिए? तो बुरे लोग कहां जाएंगे? और जो अच्छे ही हैं उनके लिए आश्रम में आने की जरूरत ही क्या है। मैं हूं किसलिए यहां? किनके लिए हूं? और फिर दूसरी बात यह कि तुम कहते वह खादी पहने वहां बैठा हुआ है इसलिए लोग क्या सोचेंगे। अगर मैं उसे वहां देखता तो अपने हृदय से लगा लेता क्योंकि मेरे मन में पहला खयाल यह ही उठता कि आश्चर्य की बात है, दिखता है मेरी बात लोगों तक पहुंचने लगी। जो आदमी शराब पीता है वह भी खादी पहनना शुरू कर दिया है। तुम यह देख रहे हो कि जो खादी पहने हुए है वह शराब पी रहा है। मैं देखता हूं कि जो शराब पी रहा है उसने भी खादी पहननी शुरू कर दी तो बहुत देर नहीं है कि यह आदमी शराब भी छोड़ दे। इसमें फर्क होना शुरू हो गया है, इसने हिम्मत तो की एक, खादी तो पहनी! इसके मन में प्रेम का तो जन्म हो गया, बदलाहट की शुरुआत हो गई। अब यह आदमी दोनों तरफ से देखा जा सकता है। ऐसा भी देखा जा सकता है कि खादी पहनकर शराब पी रहा है, तब मन होगा कि आश्रम से इसे निकालकर बाहर करो। और ऐसा भी देखा जा सकता है कि शराब पीने वाला खादी पहने हुए है, तब ऐसा होगा आश्रम में इसका स्वागत करो।

अगर इस आश्रम को बड़ा बनना है और वृहत् जन तक पहुंचना है तो फिर दूसरी तरह से ही देखना होगा, पहली तरह से नहीं देखना होगा। तब जो भी आदमी हमारे निकट आता है उसमें क्या अच्छा है, वह किस तरह सहयोगी होता है इसी भाव से देखना होगा। और मैं आपसे यह भी कह दूं, कि जिस आदमी को हम अच्छे भाव से देखना शुरू कर देते हैं उस आदमी को अच्छे होने की तरफ इतना बल देते हैं जिसकी कोई कीमत, कोई हिसाब नहीं लगाया जा सकता।

अगर बीस अच्छे आदमी एक बुरे आदमी को अच्छा मानने की तरफ ध्यान देना शुरू करते हैं तो उस आदमी का बुरा होना कठिन और मुश्किल हो जाता है। लेकिन जब सारी दुनिया किसी आदमी को बुरा कहने लगती है तो बुरे होने की उसे सुविधा हो जाती है। एक आदमी चोर हो और अगर एक आदमी विश्वास कर ले उस पर कि वह चोर नहीं है, उसकी चोरी करने की क्षमता क्षीण हो जाती है। क्योंकि ऐसा कोई भी आदमी नहीं है कि जो हृदय के अच्छे भाव का आदर न करता हो। अगर एक चोर हमारे बीच आ जाए और हम इतने सारे लोग यह विश्वास कर लें कि वह भला आदमी है वह आदमी यहां चोरी नहीं कर सकता है। यह कानून के विपरीत भी है, यह असंभव है। क्योंकि इतने लोगों ने जो उसे आदर दिया है इसे ठुकराने के लायक कोई ऐसी चीज नहीं हो सकती, जो इससे ज्यादा मूल्यवान हो जिसको चुरा लिया जाए।

एक-एक आदमी के मन में अच्छे होने का भाव है लेकिन उसे कोई अच्छा माने तब! और जब कोई उसे अच्छा मानने को मिल जाता है, तो उसके भीतर क्या जग जाता है इसका हमें कोई खयाल नहीं।

अमेरिका की एक अभिनेत्री ग्रेटा गार्बो का नाम आपने सुना होगा। वह यूरोप के एक छोटे से देश में गरीब घर में पैदा हुई। और एक बाल बनाने के सलून में, दाढ़ी पर साबुन लगाने का काम करती रही। तब वह उन्नीस वर्ष की थी। दो पैसों में दाढ़ी पर साबुन लगाने का काम नाई के दुकान में करती रही। एक अमरीकी यात्री ने—वह उसके दाढ़ी पर साबुन लगा रही थी—आईने में उसका चेहरा देखा और कहा कि बहुत सुंदर, बहुत सुंदर है! ग्रेटा ने उससे कहा क्या कहते हैं आप? मुझे आज छह वर्ष हो गए लोगों की दाढ़ी पर साबुन लगाते हुए, किसी ने मुझसे कभी नहीं कहा कि मैं सुंदर हूं। आप कहते क्या हैं, मैं सुंदर हूं! उस अमरीकन ने कहा कि बहुत सुंदर! मैंने बहुत कम इतनी सुंदर स्त्रियां देखीं। ग्रेटा गार्बो ने अपनी आत्मकथा में लिखा है, मैं उसी दिन पहली दफा सुंदर हो गई। एक आदमी ने मुझे सुंदर कहा था, मुझे खुद भी खयाल नहीं था। मैं उस दिन घर लौटी और आईने के सामने खड़ी हुई और मुझे पता लगा कि मैं दूसरी औरत हो गई।

वह लड़की जो 19 साल की उम्र तक दाढ़ी पर साबुन लगाने का काम करती रही थी वह बाद में अमरीका की श्रेष्ठतम अभिनेत्री साबित हुई। और उसने जो धन्यवाद दिया उसी अमरीकन को दिया, जिसने उसे पहली दफा सुंदर कहा था। उसने कहा कि अगर उस आदमी ने उस दिन वे दो शब्द न कहे होते तो शायद मैं जीवनभर वहीं साबुन लगाने का काम करती रहती। मुझे खयाल भी नहीं था कि मैं सुंदर भी हूं। और हो सकता है उस आदमी ने बिलकुल ही सहज कहा हो, हो सकता है उस आदमी ने सिर्फ शिष्टाचार में कहा हो। और हो सकता है उस आदमी को कुछ खयाल ही न रहा हो, सोचा भी न हो कि यह क्या कह रहा हूं बिलकुल केजुअल रिमार्क रहा हो। और उसे पता ही न हो कि मेरे एक शब्द ने एक स्त्री के भीतर सौंदर्य की प्रतिमा को जन्म दे दिया। वह जाग गई, उसके भीतर जो चीज सोई थी।

जिन लोगों से काम लेना हो उनके भीतर जो सोया है उसे जगाना जरूरी है। इसलिए वे जो हैं, इस पर ध्यान देने की कम जरूरत है, वे जो हो सकते हैं, इस पर ध्यान देने की ज्यादा जरूरत है अगर मित्रों से कोई बड़ा काम लेना हो। नहीं तो काम नहीं लिया जा सकता। अगर मैं कभी मित्रों को कहता हूं कि फलां आदमी से काम लो, मुझे बता दिया जाता है कि वह आदमी बुरा है, वह आदमी बेईमान है या उस आदमी का भरोसा नहीं किया जा सकता। यह ठीक है कि आदमी बुरा है, बेईमान है। कौन आदमी बुरा नहीं है! कौन आदमी बेईमान नहीं है! लेकिन वह आदमी क्या हो सकता है सवाल यह है, वह क्या है यह सवाल ही नहीं है। हमें उसके भीतर उसको पुकार लेना है जो वह हो सकता है, अगर उससे कोई बड़ा काम लेना हो।

गांधीजी के आश्रम में कृपलानी भोजन बनाते रहे, रसोईये का काम करते रहे। एक अमरीकी पत्रकार आश्रम में ठहरा हुआ था। उसने पूछा की यह आदमी जे. बी. कृपलानी मालूम होता है जो खाना बनाता है आपका! कृपलानी बर्तन साफ करते थे, उन्होंने कहा की यह जो बूढ़ा है अदभुत है, असल में मैं रसोइया के लिए ही योग्य था और इस आदमी ने मेरे भीतर वह जगा दिया, जिसका कोई हिसाब नहीं।

छोटे-छोटे आदमी के भीतर जादू घटित हो सकता है। एक दफा हम उसे पुकारें और उसकी आत्मा में जो सोया है उसे निकट लाएं, उस पर विश्वास करें। उसके भीतर जो सोया है उसको आवाज दे, उसको चुनौती खड़ी करें। उसके भीतर बहुत कुछ निकल सकता है। और एक बड़े से बड़े आदमी को हम निराश कर सकते हैं। एक श्रेष्ठतम व्यक्ति को हम कह सकते हैं कि तुम कुछ भी नहीं हो और अगर दस-पांच दफा सब तरफ से उसे यही सुनाई पड़े कि वह कुछ भी नहीं है तो निश्चित मानना वह कुछ भी नहीं हो जाएगा। एक बड़े पैमाने पर अगर मुल्क में कोई एक आध्यात्मिक क्रांति करनी हो...। और वह करनी जरूरी है और होनी चाहिए। और अगर हम उसके लिए सिर्फ रास्ता भी साफ कर सकें जिस पर पीछे कोई क्रांति गुजर जाएगी तो भी काफी है, बात हो गई।

यह करना हो तो बहुत व्यापक समूह बनाना जरूरी है। संगठन कभी बहुत व्यापक नहीं हो सकता, पर मित्रों का समूह बहुत व्यापक हो सकता है। क्योंकि उसमें विभिन्नता के लिए स्वीकृति है, उसमें जोर जबर्दस्ती नहीं है बांधने की किसी को।

उसमें सबके लिए मुक्ति है, कोई बंधा हुआ नहीं है। और जहां भी ऐसा मालूम होने लगता है कि हम बंधे हैं तो वहीं श्रेष्ठ आदमियों को कठिनाई शुरू हो जाती है।

कोई श्रेष्ठ चेतना बंधना नहीं चाहती, छोटे लोग ही सिर्फ बंधना चाहते हैं। जिनके भीतर एकदम क्षुद्र ही क्षुद्र है वे ही बंधने में रस लेते हैं नहीं तो कोई बंधना नहीं चाहता। इसलिए इतना खुला रखना है कि भीतर कोई आए तो उसे ऐसा लगे नहीं कि वह कहीं आया, कहीं बंध गया, वह मुक्त अनुभव करे। वह भीतर आए या बाहर जाए उसे फर्क न मालूम पड़े कि कोई भेद पड़ गया है। ऐसा यह समूह बन सके, यह मित्रों का एक दल बन सके, व्यापक बन सके; क्योंकि क्रांति कितनी बड़ी है यह प्रथम रूप से जो लोग उस क्रांति के लिए इकट्ठे होते हैं उनको पता ही नहीं होता।

लेनिन के साथियों को कोई पता नहीं था कि 1917 में जो हुआ वह सारी दुनिया में इतना अनूठा काम है, इतना अनूठा काम बनेगा! वोल्टेर या उसके मित्रों को भी पता नहीं था कि फ्रेंच क्रांति क्या ले आएगी। गांधी और उनके मित्रों को भी कोई पता नहीं था कि क्या होगा, क्या नहीं होगा।

क्राइस्ट को तो बिलकुल ही पता नहीं हो सकता था कि यह जो बात शुरू हो रही है...आठ मित्र थे केवल क्राइस्ट के। और वे भी बहुत बेपढ़े-लिखे लोग, गंवार लोग थे। कोई बढ़ई था, कोई चमार था, कोई मछुवा था। कोई पढ़े-लिखे लोग नहीं थे। क्राइस्ट को तो कल्पना भी नहीं हो सकती थी कि इतनी बड़ी क्रांति फैलेगी कि एक दिन आधी पृथ्वी क्राइस्ट के संदेश के प्रति आदरपूर्ण हो जाएगी। इसकी कल्पना भी नहीं हो सकती थी।

कौनसे बीज कितने बड़े वृक्ष बन जाएंगे, इसकी कोई कल्पना प्राथमिक रूप से बोने वालों को कभी नहीं होती। अगर उन्हें होती, तो शायद काम कितना सुंदर हो जाता इसका कभी हम खयाल भी नहीं कर सकते।

जैसे-जैसे मैं मुल्क के अधिकतम लोगों से मिला हूं यह अहसास होना शुरू हुआ है कि यह तो बड़ा वट-वृक्ष बन सकता है। इस वृक्ष के नीचे हजारों लोगों को छाया मिल सकती है। यह तो इतना बड़ा झरना बन सकता है कि लाखों लोग उससे अपनी प्यास बुझा लें। लेकिन आज कोई खयाल नहीं हो सकता उन मित्रों को जो प्राथमिक रूप से इकट्ठे हुए हैं। अगर उनको यह खयाल आ जाए तो शायद वे बहुत विचारकर काम करना शुरू कर दें।

अभी मैं एक वैज्ञानिक किताब पढ़ता था, वे रूस में कोई रास्ते बना रहे हैं, तो वे सौ साल बाद का विचार करते हैं कि सौ साल बाद इन रास्तों पर कितने लोग चलेंगे उतना चौड़ा रास्ता बनाते हैं। सौ साल बाद कितने लोग निकलेंगे इस रास्ते पर से उसके हिसाब से रास्ते की चौड़ाई बनाते हैं।

एक हम भी हैं, हमारे मुल्क में हम भी रास्ता बनाते हैं, हम दो साल बाद कितने निकलेंगे इसका भी खयाल नहीं रखते। हर दो साल बाद रास्ता तोड़ना पड़ता है कि फिर थोड़ा जोड़ो, फिर थोड़ा जोड़ो। हर पांच साल में हमको पता चलता है कि ट्राफिक ज्यादा हो गया, रास्ता छोटा हो गया। हम अंधे लोग हैं क्या? हमको इतना अंदाज नहीं कि पांच साल बाद कितने लोग निकलेंगे इस रास्ते से। अदभुत कौम है जो सौ साल बाद का विचार करते हैं कि सौ साल बाद कितने लोग होंगे इस गांव में, कितनी आबादी होगी। कितने बड़े रास्ते सौ साल बाद जरूरी होंगे अभी से बना लेना उचित है।

जो लोग इतना दूरगामी सोचते हैं उनके काम में एक सरलता और सहजता उत्पन्न होती है और बार-बार की कठिनाइयां कम हो जाती हैं।

अभी तो मित्रों का समूह छोटा है लेकिन दस साल में यह इतना बड़ा हो सकता है जिसकी आप कोई कल्पना नहीं कर सकते। और उसको ध्यान में रखकर कुछ काम करना है, उतना चौड़ा रास्ता बनाना है। अनजान, अपरिचित लोग दस साल बाद इस रास्ते पर चलेंगे। हो सकता है आप न हों, मैं न रहूं, कोई न हो लेकिन इस रास्ते पर कोई चलेगा! तो उसको ध्यान में रखकर अगर हम काम करते हैं—और हमें ध्यान रखना चाहिए कि हम बहुत मूल्य के नहीं हैं। मूल्य उस रास्ते का है जिस पर हम अपने जीवन को लगा देते हैं और वह रास्ता बन जाता है। अगर वह बड़ा बन जाता है तो बहुत लोग उस पर चल सकते हैं।

इन सारी बातों पर विस्तार में विचार करना जरूरी है, ये तो मैंने कुछ मुद्दे की बात कही, क्योंकि आसपास हम सोचेंगे इन दिनों में और इन पर विस्तार में, डीटेल्स में एक-एक बात पर क्या किया जा सकता है, क्या नहीं किया जा सकता है वह सब विचार कर लेना जरूरी है। विस्तार में मेरी समझ बहुत कम है, उसमें आपकी समझ मुझसे ज्यादा है।

मैं कुछ केंद्र की बात आपसे कह सकता हूं कि इस केंद्र पर चिंतन किया जाए लेकिन विस्तार में शायद मेरी समझ नहीं के बराबर है कि वह कैसे हो, कितने लोग करें, कितना धन जरूरी हो, कितनी शक्ति जरूरी हो, कितना श्रम लगे, वह शायद आप मुझसे ज्यादा जानते हैं। वह व्यवहारिक रूप से कैसे कितनी दूर तक पहुंचाई जाए, वह निश्चित ही आप मुझसे ज्यादा जानते हैं। मुझे उसका क ख ग भी पता नहीं। इसलिए सोचा कि मैं अपनी बात आपसे कह दूंगा और आपकी बात भी सुनूंगा और उस बीच उन दोनों बातों के मेल से कुछ बन सकेगा। मैं आपको थोड़ी सी आकाश की बातें कह सकता हूं, लेकिन पृथ्वी की बातों का मुझे बहुत पता नहीं है।

और अकेले आकाश की बातों का कोई बहुत मूल्य नहीं होता, जड़ें तो जमीन में जानी पड़ती हैं, उन्हें तो पृथ्वी से पानी पाना पड़ता है, रस खींचना पड़ता है। तो आकाश में कैसे वृक्ष फैल सकता है, उसमें कैसे फूल आ सकते हैं उनकी बात मैं करूंगा। जड़ों के संबंध में आप थोड़ा सोचना और स्मरण रखना की फूल उतने महत्वपूर्ण नहीं हैं जितनी जड़ें महत्वपूर्ण हैं। फूल जड़ों पर ही निर्भर होते हैं। तो हम इस काम के लिए कौनसी रूट्स, कौनसी जड़ें दे सकते हैं कि यह वृक्ष बड़ा हो सके।

मैं अपना सारा श्रम, अपनी सारी शक्ति—वह बड़ी हो या न हो तो भी—दूंगा ही, दे ही रहा हूं। वह मेरे लिए कोई काम नहीं, मेरा आनंद है। उसमें कोई संगी-साथी नहीं होगा तो कोई फर्क नहीं पड़ता, वह काम वैसा ही चलता रहेगा। लेकिन अगर उसमें संगी-साथी हुए तो वह काम बहुत बड़ा हो सकता है, बहुत दूर तक पहुंच सकता है। अनेक लोगों तक पहुंच सकता है।

इन थोड़ी सी बातों में मैंने यह बात कही, इस पर आप थोड़ा सोचें। डीटेल्स के लिए, विस्तार के लिए कि क्या हो सकता है, कैसे हो सकता है, बहुत खुले मन से सोचें और उस पर हम यहां विचार करें। कल सुबह आप सबके मत आमंत्रित हैं उनको आप कहें, उन पर सोचें, कुछ निर्धारित करें।

यह तो छोटा शिविर लिया है। फिर खयाल यह है कि पूरे मुल्क के जो मेरे मित्र हैं जो इस काम में उत्सुक हुए उन सबका एक शिविर हो। अभी तो प्रयोग के लिए ताकि थोड़े से लोग ज्यादा आसानी से सोच सकेंगे। ज्यादा लोग होंगे तो शायद कठिनाई पड़ेगी तो हम सोचें फिर एक बड़ा शिविर हो, जिसमें पूरे मुल्क से मित्र इकट्ठे हो जाएं। उनका आपस में भी मिलना जरूरी है। उनकी एक-दूसरे से पहचान होना भी जरूरी है। वे अपनी अपनी जगह पर काम कर रहे हैं, उनके काम के लिए आपके सहयोग और सदभावनाएं जरूरी हैं। वे वहां अकेले न मालूम पड़ें, उन्हें ऐसा लगे कि और मित्र भी हैं पूरे मुल्क में। वे कहीं अकेले में खड़े हुए नहीं हैं, कोई साथी उनके हैं, जरूरत पड़ी भी तो वह साथ देंगे, सुझाव देंगे, वहां काम की जरूरत होगी तो वहां पहुंचकर कुछ करेंगे।

अभी राजकोट के मित्रों ने मुझसे कहा कि हम उन नगरों में जाकर आपकी बात पहुंचाना चाहते हैं जहां आप अभी नहीं गए और वहां भूमिका खड़ी करना चाहते हैं ताकि आप वहां जा सकें। यह बात जरूरी होगी। मैं एक नए नगर में जाता हूं, दस-पच्चीस, सौ-दो सौ, हजार-पांच सौ लोग सुनते हैं। अगर वहां भूमिका बन सके पहले से तो वहां दस हजार लोग सुन सकते हैं, पचास हजार लोग सुन सकते हैं। तो जगह जगह मित्र अलग अलग सुझाव देते हैं, उनके सुझाव महत्वपूर्ण हैं, उपयोग के हैं। वह सारे मित्र पीछे इकट्ठे हों और विचार कर सकें उससे भी इसकी एक यहां भूमिका बन जाएगी।

तो अभी तो और ज्यादा नहीं कहूंगा। फिर विस्तार में कल सुबह से हम बात शुरू करेंगे। और आप यहां सुनने नहीं आएं हैं यह ध्यान में रहे। ये कोई मेरी चर्चाओं के लिए आयोजन नहीं है। ये मैंने जो इतनी बात भी की, वह इसीलिए ताकि आप बोल सकें। यह मेरा बोलना नहीं है—आप विचार कर सकें और सामूहिक विचार से और सामूहिक चिंतन से कुछ निष्पत्तियां हम लें इन दो दिनों में इस तरफ खयाल है ताकि हम कुछ निश्चित निष्कर्ष लेकर चल सकें और उन पर कुछ काम हो सके।

बस!

वर्कर्स कैंप—लोनावला

प्रवचनः 3, 24 दिसंबर, 1967

मनुष्य के जीवन में और विशेषकर इस देश के जीवन में, कोई सवागीण क्रांति आ सके, उसके लिए साधनों के संबंध में दिनभर हमने बात की। लेकिन साधन अत्यंत जड़, अत्यंत परिधि की बात है। उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण और जरूरी वे मित्र हैं जो उस क्रांति को और आंदोलन को लोगों तक ले जाएंगे। उन मित्रों के संबंध में थोड़ी बात कर लेनी बहुत जरूरी होगी।

एक तो—जब भी किसी नए विचार को, किसी नई हवा को, लोकमानस तक पहुंचाना हो तब जो लोग पहुंचाना चाहते हैं, उनकी एक विशेष मानसिक तैयारी अत्यंत जरूरी और आवश्यक है। यदि उनकी मानसिक तैयारी नहीं है तो वे जो पहुंचाना चाहते हैं उसे तो नहीं पहुंचा पाएंगे। बल्कि हो सकता है उनके सारे प्रयत्न जो वे नहीं चाहते थे वैसा परिणाम ले आएं।

मानसिक तैयारी से मेरा क्या प्रयोजन है, क्या अर्थ है?

एक तो—जिन लोगों ने भी जगत में मनुष्य के हृदय तक कोई नए विचार-बीज पहुंचाए हैं, मनुष्य के हृदय में कोई नई फसल उगाने की कोशिश की है, उसकी भूमिका में बहुत गहरे प्रेम, बहुत गहरी दया और करुणा का हाथ रहा है।

दो बातें हैंः एक तो जो विचार हम करते हैं वह विचार हमें प्रीतिकर लगता है इसलिए हम उसे लोगों तक पहुंचाएं। साथ ही जिन लोगों तक पहुंचाना है, उनके प्रति हमें इतना प्रेम मालूम होता है कि हम इतनी महत्वपूर्ण बात उन तक बिना पहुंचाए नहीं रुकेंगे। अकेला विचार के प्रति आदर का भाव खतरनाक भी हो सकता है। जिन लोगों तक हमें पहुंचाना है उनके प्रति प्रेम; वे ऐसी स्थिति में हैं कि उन तक पहुंचाना है इस खयाल को ज्यादा जरूरी और केंद्रीय होना चाहिए। क्योंकि जब उनके प्रति हमें प्रेम नहीं होता और केवल किसी विचार को पहुंचाने की तीव्रता हमारे मन में होती है, तो हम जाने-अनजाने लोगों के साथ हिंसा करना शुरू कर देते हैं।

ऐसा पूरे मनुष्यजाति के इतिहास में होता रहा है। मुसलमानों ने सारी दुनिया में जाकर लोगों के मंदिर तोड़ दिए, मूर्तियां तोड़ दीं। एक खयाल के वशीभूत होकर कि मूर्ति परमात्मा तक पहुंचने में बाधा है। फिर इस खयाल को पहुंचाने के लिए वे इतने दीवाने हो गए कि इस बात की फिकर ही छोड़ दी कि जिन लोगों तक पहुंचाना है, कहीं उनकी हत्या तो नहीं हुई जा रही, कहीं वे दबाए तो नहीं जा रहे, कहीं उनके साथ हिंसा तो नहीं हो रही। उन्हें विचार इतना महत्वपूर्ण हो गया कि जिस तक पहुंचाना है, वह कम महत्व का हो गया। सारी दुनिया में आज तक विचारों को पहुंचाने वाले लोगों ने बहुत हिंसा की है। और वह हिंसा इस कारण हो सकी कि विचार तो बहुत महत्वपूर्ण हो गया और जिस तक पहुंचाना है, उसकी कोई फिकर न रही। यह खयाल में रखना जरूरी है विचार कितना ही महत्वपूर्ण हो लेकिन विचार से भी ज्यादा महत्वपूर्ण वह है जिस तक हमें पहुंचाना है। वह गौण नहीं है। वही मूल्यवान है। और हम विचार को सिर्फ इसलिए उस तक पहुंचाना चाहते हैं।

एक भूखा आदमी है। उसके पास हम भोजन पहुंचाते हैं। भोजन का कोई मूल्य नहीं है, मूल्य तो उस आदमी की भूख का है। वह भूखा है इसलिए हम भोजन पहुंचाना चाहते हैं। लेकिन अगर भोजन महत्वपूर्ण हो जाए और वह आदमी भोजन लेने से इनकार कर दे और हम उसके साथ दुर्व्यवहार करने लगें और जबर्दस्ती पकड़कर, हथकड़ियां डालकर उसको भोजन कराने लगें तो फिर हमें भोजन महत्वपूर्ण हो गया और उसकी भूख कम महत्वपूर्ण हो गई। अब तक दुनिया में ऐसा ही हुआ है। विचार महत्वपूर्ण हो जाता है। जिस तक पहुंचाना है, जो भूखा है वह कम महत्वपूर्ण हो जाता है।

यह ध्यान में रखना जरूरी है कि हमारे लिए विचार इतना महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण तो वही व्यक्ति है—वह जो दुख और पीड़ा में खड़ा हुआ आज का मनुष्य है वही महत्वपूर्ण है। उसके उपयोग में आ सके कोई बात तो हम सेवा के लिए तैयार हैं। लेकिन उस पर कुछ थोप नहीं देना है। कोई फेनेटिक खयाल पैदा नहीं हो जाना चाहिए कि उसे उस पर थोप देना है। ऐसा अक्सर हो जाता है, सहज हो जाता है, अनजाने हो जाता है। हमें पता भी नहीं होता। तो वह ध्यान में रखना जरूरी

है। जब काम को बड़ा करने का खयाल पैदा हो गया तो वह काम सच में कैसे बड़ा होगा, कैसे उदात्त होगा उसकी सारी भूमिका भी ध्यान में रख लेनी जरूरी है।

तो पहली तो बात यह ध्यान में रख लेनी जरूरी है।

दूसरी बात यह ध्यान में ले लेनी जरूरी है कि हम जो इस दिशा में काम करने वाले मित्र होंगे इन मित्रों को बहुत सा आत्म-परीक्षण, बहुत सा आत्म-निरीक्षण करना होगा। आप अकेले हैं तब तक कोई बात नहीं, आप जैसे भी हैं ठीक हैं। लेकिन जिस दिन आप कोई बात किसी दूसरे तक पहुंचाना चाहते हैं उस दिन अत्यंत विचार की, अत्यंत निरीक्षण की जरूरत पड़ जाती है। उस दिन यह बहुत ध्यान रखने की जरूरत है कि मैं क्या बोलता हूं, कैसे बोलता हूं, क्या मेरा व्यवहार है? क्योंकि एक बड़े विचार को लेकर जब मैं जा रहा हूं तो मेरे विचार का उतना ही आदर होगा जितनी मेरे व्यक्तित्व और मेरे व्यवहार की गहराई होगी। क्योंकि मेरे विचार को तो लोग बाद में देख पाएंगे, मुझे पहले देख लेंगे। मैं तो उन्हें पहले दिखाई पड़ जाऊंगा। मेरा विचार तो मेरे पीछे आएगा। मुझे देखकर वह मेरे विचार और मेरे जीवन-दर्शन के प्रति उत्सुक होंगे।

तो जब भी कोई संदेश पहुंचाने के किसी काम में संलग्न होता है तो संदेश पहुंचाना अनिवार्य रूप से एक आत्मक्रांति बननी शुरू हो जाती है। तब उसका व्यवहार, उसका उठना-बैठना, उसका बोलना, उसके संबंध, सब महत्वपूर्ण हो जाते हैं। और वे उसी अर्थ में महत्वपूर्ण हो जाते हैं जितनी बड़ी बात वह पहुंचाने के लिए उत्सुक हुआ है। वह वाहक बन रहा है, वह वाहन बन रहा है किसी बड़े विचार का। तो उस बड़े विचार के अनुकूल उसे अपने व्यक्तित्व को जमाने की भी जरूरत होती है। नहीं तो अक्सर यह होता है कि विचार के प्रभाव में हम उसे पहुंचाना शुरू कर देते हैं और हम यह भूल ही जाते हैं कि हम उसे पहुंचाने की पात्रता स्वयं के भीतर खड़ी नहीं कर रहे हैं। इस पात्रता पर भी ध्यान देना जरूरी है।

साधक का काम उतना बड़ा नहीं है जितना कार्यकर्ता का बड़ा है। साधक अकेला है, अपने में जीता है, अपने लिए कुछ कर रहा है। कार्यकर्ता ने और भी बड़ी जिम्मेवारी ली है। वह साधक भी है और जो उसे प्रीतिकर लगा है उसे पहुंचाने के लिए वह माध्यम भी बन रहा है। तो यह माध्यम का खयाल...। और यह माध्यम कैसा हो, कैसे लोगों तक पहुंचा सकेगा, छोटी-छोटी चीज से फर्क पड़ जाता है। एक-एक शब्द से फर्क पड़ जाता है। इधर तो मैं देखता हूं एक छोटी सी बात थोड़े से और ढंग से कही जाए तो किसी के हृदय में पहुंच जाती है। थोड़े और ढंग से कही जाए तो कोई लड़ने को तैयार हो जाता है।

राजा भोज के दरबार में एक ज्योतिषी आया। उसने राजा भोज का हाथ देखा और कहा कि तू अत्यंत अभागा व्यक्ति है। अपने लड़के को अरथी पर तू ही चढ़ाएगा। अपनी पत्नी को भी अरथी पर तू ही चढ़ाएगा। तेरे सारे लड़के, तेरी सारी लड़कियां—तू ही उनको मरघट तक पहुंचाएगा। भोज ने क्रोध से उस ज्योतिषी को हथकड़ियां डलवा दीं और कहा कि इसको जाकर जेलखाने में बंद कर दो। कैसे बोलना चाहिए यह भी इसे पता नहीं है क्या बोल रहा है पागल।

कालिदास बैठकर यह सारी बात सुनते थे। वह ज्योतिषी चला गया तो कालिदास ने कहा कि उस ज्योतिषी को पुरस्कार देकर विदा कर दें। राजा ने कहा, उसे पुरस्कार दूं। सुनते हो तुम उसने क्या कहा था। कालिदास ने कहा कि क्या मैं भी आपका हाथ देखूं? कालिदास ने हाथ देखा और कहा कि आप बहुत धन्यभागी हैं। आप सौ वर्ष के पार तक जीएंगे। आप बहुत लंबी उम्र उपलब्ध किए हैं। आप इतने धन्यभागी हैं कि आपके पुत्र भी आपकी उम्र नहीं पा सकेंगे, पीछे छूट जाएंगे।

राजा ने कहा, क्या यही वह कहता था? कालिदास ने कहा यही वह कह रहा था लेकिन उसके कहने का ढंग बिलकुल ही गड़बड़ था। भोज ने उसे एक लाख रुपए इनाम दिया उसे विदा किया सम्मान से। और उससे जाते वक्त कहा, मेरे मित्र अगर यही तुझे कहना था तो ऐसे ही तूने क्यों न कहा। तूने कहने का ढंग कौन सा चुना?

जोशुआ लीयनमेन करके एक यहूदी विचारक और पुरोहित था। उसने संस्मरण लिखा है कि जब मैं युवा था और पहली दफा गुरु के आश्रम में शिक्षा लेने गया तो मेरा एक मित्र भी मेरे साथ, था हम दोनों को सिगरेट पीने की आदत थी। हम दोनों ही परेशान थे कि क्या करें, क्या न करें? सिर्फ एक घंटा मानेस्टरी के बाहर ईश्वर चिंतन के लिए बगिया में जाने को मिलता था। उसी वक्त पी सकते थे सिगरेट और तो कोई मौका न था। लेकिन फिर भी यह सोचा कि पीने के पहले गुरु को पूछ लेना उचित है तो मैं और मेरा मित्र दोनों पूछने गए। जब मैं पूछकर वापस लौटा तो मैं बहुत क्रोध में था क्योंकि गुरु ने मुझे

मना कर दिया था। और जब मैं बगीचे में आया तो मेरा क्रोध और भी बढ़ गया क्योंकि मेरा मित्र तो आकर बेंच पर बैठा हुआ सिगरेट पी रहा था। मालूम होता है कि गुरु ने उसे हां भर दी। यह तो हद अन्याय हो गया। मैंने जाकर उस मित्र को कहा कि मुझे तो मना कर दिया है उन्होंने क्या तुम्हें हां भर दी है या कि तुम बिना उनकी हां किए ही सिगरेट पी रहे हो। उस मित्र ने कहा कि तुमने क्या पूछा था? लीयनमेन ने कहा कि मैंने पूछा था कि क्या हम ईश्वर चिंतन करते समय सिगरेट पी सकते हैं, उन्होंने कहा नहीं बिलकुल नहीं।

लीयनमेन ने अपने मित्र से कहा, तुमने क्या पूछा था? उसने कहा मैंने पूछा था क्या हम सिगरेट पीते समय ईश्वर चिंतन कर सकते हैं। उन्होंने कहा हां। बिलकुल कर सकते हो।

ये दोनों बातें बिलकुल एक थीं। ईश्वर चिंतन करते समय सिगरेट पीएं या सिगरेट पीते समय ईश्वर चिंतन करें। लेकिन दोनों बातें बिलकुल अलग हो गइ। एक बात के उत्तर में उसी आदमी ने इनकार कर दिया। दूसरी बात के उत्तर में उसी आदमी ने हां भर दिया। निश्चित ही कौन स्वीकार करेगा कि ईश्वर चिंतन करते समय सिगरेट पीओ। कौन अस्वीकार करेगा कि सिगरेट पीते समय ईश्वर चिंतन करें या न करें। कोई भी कहेगा अच्छा ही है। अगर सिगरेट पीते समय भी ईश्वर चिंतन करते हो तो बुरा क्या है, ठीक है।

उस दूसरे युवक ने कहा कि पहले मेरे मन में भी वही पूछने का खयाल आया था क्योंकि सीधी बात वही थी। लेकिन फिर तत्क्षण मुझे खयाल आया कि भूल हो जाएगी। अगर मैं पूछता हूं कि ईश्वर चिंतन करते समय सिगरेट पी सकता हूं तो मैंने पहले ही जान लिया था कि उत्तर नहीं में मिलने वाला है।

लीयनमेन ने लिखा है कि फिर मैंने जिंदगी में बहुत बार इसका प्रयोग किया और तब तो धीरे-धीरे मुझे समझ में आया कि दूसरे आदमी से हां या न निकलवा लेना उस आदमी के हाथ में नहीं, तुम्हारे हाथ में है। वह दूसरे आदमी को पता भी नहीं चलता कि तुमने कब उससे हां निकलवा ली या कब तुमने न निकलवा ली। और अगर दूसरा आदमी न करता है तो सोच लेना कि हमसे कहीं कोई भूल हो गई। हो सकता है हमारे भाव बिलकुल सही हों, हमारा खयाल सही हो, सिर्फ हमारा मौजूद करने का ढंग गलत हो गया होगा। अन्यथा इस दुनिया में कोई भी आदमी न करने को तैयार नहीं है। हर आदमी हां करना चाहता है। लेकिन हां कहवाने वाले लोग, उनकी तैयारी, उनकी समझ, उनकी सूझ उस सब पर निर्भर करता है कि हम कैसे मौजूद करते हैं।

जब एक क्रांतिकारी दृष्टि को, हजारों सालों की रूढ़ियों से बंधे हुए समाज के सामने ले जाना हो, एक बड़ा काम खड़ा करना हो, एक विश्व केंद्र खड़ा करना हो जहां से कि धीरे-धीरे वह खयाल जीवित मनुष्यों को बदलने के लिए सक्रिय हो सके तो रुपया नहीं है उतना महत्वपूर्ण, क्योंकि रुपया भी आ जाए और अगर दो-चार गलत आदमी भी उस केंद्र के दरवाजों पर खड़े हैं तो सब रुपया व्यर्थ हो जाएगा। वह कोई मतलब का नहीं है। और यह भी सवाल नहीं है कि आप किसी से रुपया ले आएं। रुपया ले आया जा सकता है। सवाल तो यह है कि उस रुपए के साथ जिससे आप रुपया लाए हैं, उस आदमी का हृदय भी आ जाए। नहीं तो ऐसा रुपया लाने की कोई जरूरत नहीं है। कई बार तो हम सिर्फ पीछा छुड़ाने के लिए रुपया दे देते हैं कि कोई हटे, टले यहां से। ऐसा रुपया तो लाना ही नहीं है वहां। क्योंकि ऐसा रुपया बहुत महंगा है जो एक आदमी को खोकर हम लाए। वह जो देता है, वह देकर आनंदित हो और अनुभव करे निरंतर कि मैंने कम दिया। ऐसी पूरी भाव-भूमि हम उसके लिए खड़ा कर सकें। रुपए का ही नहीं श्रम, और बुद्धि, साथ-सहयोग जो कुछ भी हम किसी से लेते हैं उसे लगे कि जो व्यक्ति लेने आया था, जिस काम के लिए लेने आया था उसके लिए यह बहुत कम था। और मेरी असमर्थता थी कि मैं पूरा नहीं साथ दे सका। और उसके मन में खयाल रहे कि कल साथ देने के लिए आतुर हो। तो इस सबके लिए एक भाव-भूमि, वे लोग जो कार्य के संदेश वाहक बनते हैं—किसी भी कार्य के—उनकी पूरी भाव-भूमि, उनकी पूरी पात्रता, उनका पूरा प्रशिक्षण, उनका पूरा खयाल, उनके विचार, उनकी सारी बातें। संबंधित होना एक कला है किसी व्यक्ति से संबंधित होना एक बहुत बड़ा आर्ट है।

कठिनाई हमें मालूम पड़ती है कि एक करोड़ कठिन बात होगी। कठिन इसलिए मालूम पड़ती है कि हमें संबंधित होने की कला का कोई बोध नहीं है। इसलिए बहुत कठिन मालूम हो जाता है। संबंधित होना बड़ी सूझ और समझ की बात है। हम

तो किसी से टूटना बहुत आसानी से जानते हैं। किसी से जुड़ना बहुत कठिन है। हम घृणा करना बहुत आसानी से सीख लेते हैं प्रेम करना नहीं। शत्रु बनाना एकदम सरल है, सवाल तो मित्र बनाने का है। और एक आदमी उतना ही सफल जीवन और कलात्मक ढंग से जीआ जिसके मित्र रोज बढ़ते चले गए हों। जो मरते समय कह सके कि मेरे इतने मित्र हैं पृथ्वी पर जिसका कोई हिसाब नहीं।

आमतौर से उलटा होता है। बचपन में मित्र बहुत होते हैं, बूढ़े होते-होते कम होते चले जाते हैं। बचपन की बहुत याद आती है कि बहुत मित्र थे सब अच्छा था। धीरे-धीरे आदमी बूढ़ा होता है मित्र कम होते चले जाते हैं। जीवन के जीने में संबंधित होने की कला में कोई कमी रह गई होगी अन्यथा मित्र बढ़ते चले जाना चाहिए। जो भी संबंधित हो वह मित्र हो जाना चाहिए।

रूजवैल्ट पहला इलेक्शन लड़ा। उसने दस हजार लोगों को व्यक्तिगत नाम से पत्र लिखे। उन दस हजार लोगों को व्यक्तिगत नाम से पत्र लिखे। उनमें टैक्सी चलाने वाला ड्राइवर भी था। स्टेशन का कुली भी था। होटल का बैरा भी था। उसने सब लोगों को लिखा। हैरान हो गए लोग क्योंकि एक बैरे को, एक कुली को, एक टैक्सी ड्राइवर को पत्र मिला रूजवैल्ट का, व्यक्तिगत नाम से लिखा हुआ कि मैं तो डरता था कि खड़ा हो जाऊं या न खड़ा होऊं। लेकिन जब तुम्हारा खयाल आया तो मैंने कहा एक वोट तो पक्का है तो मैं खड़ा हो रहा हूं। तुम्हारी पत्नी की तबियत अब कैसी है? जब मैं आया था तुम्हारे गांव उसकी तबियत खराब थी और तुम्हारा लड़का अब बड़ा हो गया होगा और उसकी नौकरी का क्या हुआ? मेरी कोई जरूरत हो तो मुझे कहना।

दस हजार बिलकुल सामान्यजनों को जब ये पत्र मिले तो वह भूल ही गए रूजवैल्ट किस पार्टी का है और नहीं है। यह आदमी ने याद रखा। वह जिस स्टेशन पर जाता तो पिछली दफे जिसकी टैक्सी में बैठा था उसका नाम लेकर बुलाता कि फलां आदमी कहां है, वह अपना मित्र है, परिचय है पुराना उसके साथ। वह टैक्सी में बैठकर पांच मिनट जाता तो पांच मिनट व्यर्थ नहीं छोड़ता था, पांच मिनट में टैक्सी ड्राइवर से दोस्ती कर लेता। उससे पूछ लेता उसकी पत्नी कैसी है, उसके बच्चे कैसे हैं, कौन क्या कर रहा है।

रूजवैल्ट से उसके मित्रों ने कहा तुम क्या फिजूल की बातें करते हो। उसने कहा कि तुम पागल हो। एक मनुष्य के साथ पांच मिनट का मौका मिला है कि मैं उसका मित्र हो जाऊं और तुम कहते हो कि फिजूल की बातें करते हो। जीवन में मित्रता की संपत्ति के अतिरिक्त और क्या अर्थ है, सार्थक क्या है। पांच मिनट एक व्यक्ति मुझे जीवित मिला है। ये पांच मिनट मैं चुपचाप पीछे बैठा रह सकता हूं। लेकिन पांच मिनट में मैं उसके हृदय के निकट भी पहुंच सकता हूं तो पांच मिनट व्यर्थ खो देने का कोई कारण नहीं है उनका मैं उपयोग कर रहा हूं। तो रूजवैल्ट ने लाखों की संख्या में मित्र बना लिए जिनको कुछ भी नहीं दिया। मित्रता देने में कुछ देना तो नहीं पड़ता। सिर्फ एक प्रेमपूर्ण खुला हुआ हृदय, सिर्फ बढ़ाया हुआ एक हाथ—सब पूरा हो जाता है। शायद सामान्य जीवन में हमें बहुत जरूरत भी नहीं पड़ती बहुत मित्र बनाने की।

लेकिन जो लोग किसी विचार को पहुंचाने के लिए उत्सुक हो गए हों उन्हें निरंतर मित्रता का दायरा बड़ा होता जाए इसका खयाल रखना जरूरी है। जो भी आदमी एक बार संपर्क में आता है वह मित्र बन ही जाए। यह, मित्रों का जो समूह है, ये मित्र रोज बढ़ते चले जाएं और जो भी व्यक्ति निकट आता है वह मित्र बन जाए।

मैं तो यहां तक हैरान हुआ हूं, जिन घरों में मैं ठहरता हूं उन घरों के जो निकटतम मित्र हैं वह भी मुझसे परिचित नहीं हैं। क्योंकि उस घर के लोगों ने उन मित्रों को भी मुझसे मिलाने की कभी कोई फिकर नहीं की। जिन घरों में मैं ठहरता हूं उनके मेहमान, उनके परिचित, उनके संबंधी आते हैं तो वे मुझे मिलाते हैं कि ये हमारे भाई हैं। तो मैं उनसे पूछता हूं कि दो वर्ष हो गए इन भाई को कभी तुमने मुझे मिलाया नहीं। वे कहेंगे, नहीं कोई खयाल नहीं आया कुछ! इनको कभी लाए नहीं?—नहीं इनको कुछ मौका नहीं मिला कहने का। बहुत हैरानी होती है।

एक व्यक्ति जीवन में तो इतने बड़े मित्रों के जगत से संबंधित हो सकता है। एक दफा खयाल, एक दफा बोध, इस बात का होश मन में हो तो हम दस वर्ष के भीतर—आप एक करोड़ रुपया कहते हैं—एक करोड़ मित्र खड़े कर सकते हैं। कोई कठिनाई नहीं है जरा भी, कोई जरा सी अड़चन नहीं। पर वह हमारे खयाल में हो और मैं आपको ध्यान दिलाना चाहूंगा।

रुपए कि उतनी फिकर न करें, जितनी मित्रों की फिकर करें। क्योंकि रुपए तो मित्रों के साथ चले आएंगे उसका क्या है? उसका क्या उपयोग है?

लेकिन मित्रों की हम फिकर न करें और रुपए की हम फिकर करें तो सब गड़बड़ हो जाएगा या मित्र की भी हम इसलिए फिकर करें कि उससे रुपए लेना है तो भी सब गड़बड़ हो जाएगा। जब भी हम किसी आदमी के पास रुपए लेने जाते हैं तब हम उस आदमी का अपमान करते हैं इसका हमें पता नहीं।

अभी मेरे एक मित्र की लड़की की शादी हुई। वह बहुत धनी हैं। और यह उनकी लड़की ही थी, लड़का उनका कोई है नहीं। उस लड़की को जो भी लड़के देखने आए वह इनकार करती चली गई। उसके पिता परेशान हो गए। वे लड़की को लेकर आए और मुझे उन्होंने कहा हम बहुत मुश्किल में पड़ गए हैं। यह हर एक को इनकार कर देती है, यह चाहती क्या है? उस लड़की ने मुझसे कहा कि अभी तक मुझे ऐसा लड़का नहीं दिखाई पड़ा जो मेरे लिए आया हो। वे पिता के पैसे के लिए आते हैं। इससे बड़ा मेरा कोई अपमान नहीं हो सकता कि कोई आदमी धन के लिए मुझसे विवाह करे। वे धन के लिए आते हैं यह देखकर ही मेरे लिए बात खतम हो जाती है। जब मेरे लिए कोई आएगा तो मैं तैयार हूं। लेकिन कोई मेरे लिए तो आए।

जब भी आप किसी के पास उसके धन के लिए जाते हैं तब आप उसका अपमान करते हैं, इसका आपको खयाल नहीं। और जब इस अपमान में वह आपको धन भी देने से इनकार करता है तो आप बड़े हैरान होते हैं कि बड़ा कंजूस है, बड़ा कृपण है। दो पैसे नहीं देता है। आपको पता ही नहीं वह पैसे दे कैसे? आप पैसे के लिए वहां गए हुए हैं। वह जाना इतना अपमानजनक, इतना इन्सल्टिंग है किसी भी मनुष्य के लिए जिसका कोई हिसाब नहीं। मनुष्य के लिए जाएं, पैसा तो आदमी की छाया की तरह आता है, ताकत तो छाया की तरह आती है। मित्र आ जाएं उनकी छायाएं आ जाएंगी उनको लाने के लिए नहीं जाना पड़ता। लेकिन अगर आप किसी के घर जाएं और कहें कि आपकी छाया को मैं सभा में आने के लिए आमंत्रित करता हूं तो फिर हो गया आमंत्रण पूरा! न वह छाया आने वाली है न वह आदमी आने वाला है।

धन तो आदमी की छाया है यह जब तक हम नहीं समझेंगे तब तक हम भूल में पड़ते हैं। आदमी आता है उसके पीछे उसकी ताकत आती है, उसका प्रेम आता है, उसकी शक्ति आती है, उसकी छाया आती है। और छाया तो खुशी से नाचती हुई चली आती है उसे कोई लाने ले जाने कहीं जाना नहीं पड़ता।

इधर मैं यह प्रार्थना करूंगा कि कहीं ऐसा न हो कि आपको एक करोड़ रुपया इकट्ठा करने का सीधा खयाल पकड़ जाए। यह सीधा खयाल नहीं है। यह तो मित्र बढ़ाने का सवाल है। यह अधिकतम मित्रों को निकट लाने का सवाल है। रुपए का सवाल ही नहीं है यह, यह मामला आर्थिक नहीं है। तो वह जो फंड का आपने नाम रखा है, क्या नाम रखा है उसका क्या आप कह रहे हैं कुछ गुजराती में—भंडोर नहीं—वह मित्र संग्रह का नाम रख लें उसको मित्र संग्रह का फंड कहें। भंडोर बिलकुल नहीं। वह बात ही गलत है। उसका कोई मतलब नहीं है। वह जो जैसे मायाभाई हैं वह उस फंड कलेक्शन के संयोजक हुए। उनको याद रखना चाहिए कि मित्र संग्रह करने के संयोजक हुए वह पैसे-वैसे का उतना सवाल नहीं है।

राजी हो गए—हां राजी होना चाहिए क्योंकि पैसा देने वाले को भी कठिन होता है मांगने वाले को भी कठिन मालूम पड़ता है। मित्र बढ़ते जाने चाहिए। पैसे-वैसे तो गौण बात हैं, वह आ जाएगा उसमें कोई सवाल नहीं है बड़ा।

हमारे मित्र बढ़ते जाएं यह हमारे सारे मित्रों को खयाल रखना है। और हमारा जो भी मित्र है उसको ध्यान रखना है कि एक भी आदमी जो निकट आता है वह हमारा हो जाए। वह हमारे व्यवहार से, हमारे संबंध से, हमारे बोलने से, हमारा हो जाए। हमारा एक भी शब्द उसे दूर ले जाने वाला नहीं निकट लाने वाला बने।

यह अगर खयाल में रहा तो कोई कठिन नहीं है। दो साल में इतने मित्र इकट्ठे होंगे! हमें पता ही नहीं है कि मित्रों को बढ़ाया जाना है, उनका दायरा बढ़ाया जाना है। जो भी आदमी निकट आता है वह मित्र हो ही जाना चाहिए। यह मौका नहीं चूक जाना चाहिए वह आदमी आया है। उसका पूरा सम्मान इसमें है कि हम उसे मित्र बनाते हैं।

यह तो हमें खयाल ही नहीं है न दिनभर में कौन आदमी कितने लोगों से मिल रहा है कितने लोगों के निकट जा रहा है, कितने लोगों से संबंधित हो रहा है।

लेकिन हम अपने काम से व्यस्त हैं। काम से मतलब है, मित्रता से तो कोई मतलब नहीं। सीधी और सरल मित्रता का हमें खयाल नहीं है। और जब भी कोई आदमी सीधी और सरल मित्रता का खयाल लेता है तो जिनको हम बिलकुल कमजोर कहें, सामर्थ्यहीन कहें, दीन-दीन कहें वे इतने बल की तरह आने शुरू हो जाते हैं। इतने सबल होकर आने शुरू हो जाते हैं। तो मेरी दृष्टि में एक तो यह आपसे कहना था कि रुपए की बात बहुत महत्वपूर्ण है। इसलिए कहीं वह इतनी महत्वपूर्ण न हो जाए कि हमारा सारा चित्त उसके आसपास ही चिंतन करने लगे। उसे हमेशा मनुष्य से नीचे और मित्रों से पीछे रखना है।

एक मित्र अगर बनता हो रुपया खोकर तो मित्र बचा लेना रुपया खो देना। और एक आदमी अगर रुपया देकर मित्रता छोड़ता हो तो रुपया नहीं लेना है मित्रता बचा लेना है। वह ज्यादा दूरदृष्टि होगी, ज्यादा अर्थपूर्ण होगी, ज्यादा गहरी होगी, ज्यादा फायदे की होगी। तो इस पर थोड़ा ध्यान देना है। और कुछ भय अगर काम करने वाले मित्रों के मन में हों तो काम में पीछे से रुकावट लगती है, खुद के भीतर से रुकावट लगती है। बाहर से उतनी रुकावट नहीं लगती काम में जितनी भीतर मेरे कोई भय हो उससे रुकावट लग जाए। तो भीतर के भय का हमें बिलकुल ही स्पष्टीकरण कर लेना चाहिए।

तो जब यहां इकट्ठे हुए हैं तो भीतर कोई भी भय हो हमारे उसे भीतर छिपा कर नहीं रख लेना चाहिए क्योंकि भीतर छिपा हुआ वह मौजूद रहेगा और वह पीछे से खींचता रहेगा। कदम को बढ़ाने में डर देगा कि कहीं यह खतरा न हो, कहीं वह खतरा न हो। तो वे सारे भय हमें स्पष्ट कर लेने चाहिए ताकि एकदम अभय मन हो। जितना अभय मन होता है उतनी तीव्र गति से काम कर पाता है। अगर भय है भीतर तो हम अपने हाथ को अपने हाथ से खींचते रहते हैं। हम खुद डरे रहते हैं। हम कहते भी हैं कि काम करना है और डरे भी रहते हैं कि कहीं वह भय खड़ा न हो जाए, कहीं यह भय खड़ा न हो जाए।

मुझे लगता है कि सबसे बड़ी जो रुकावट बनती है इस दिशा में सक्रिय होने में वह भीतर के भय होते हैं। कई तरह के भय हो सकते हैं। इन सारे भयों पर विचार कर लेना चाहिए। इन सारे फीयर्स को ठीक से समझ लेना चाहिए। और समझकर बिलकुल निर्भय हो जाना चाहिए। अगर ये मन में काम करते चले जाते हैं तो आप पाएंगे कि आप अपने ही हाथ से खुद को रोकने की जंजीरें भीतर खड़ी किए हुए हैं।

जैसे उदाहरण के लिए एक-दो-चार भय की हम बात कर लें कि क्या भय हो सकते हैं? बहुत तरह के भय हो सकते हैं।

सबसे बड़ा भय—जैसे यहां इतने मित्र इकट्ठे हुए हैं। जब भी हमें यह खयाल उठता है कि इतना रुपया इकट्ठा करना है, इतना काम करना है, इतनी व्यवस्था करनी है तो एकदम से सीधा सवाल उठता है कि मुझे तो नहीं देना पड़ेगा यह रुपया, मुझे तो नहीं करना पड़ेगा यह। पहला भय मन के भीतर सहज खड़ा हो जाता है कि इसमें मैं कहां हूं—इसमें भय आ जाएगा। यह जो भय खड़ा होता है यह भय एकदम ही निर्मूल है। निर्मूल इसलिए है कि किसी संकोच से तो किसी को इसमें जरा भी सहयोग नहीं देना है। अगर किसी मित्र को लगता है कि इसलिए मुझे भय है तो उसे उठकर कह देना चाहिए—जैसे अभी खेतानजी ने कहा—वह बिलकुल ठीक कहा—तो कह देना चाहिए कि मैं इसमें कुछ भी नहीं दूंगा। लेकिन यह काम बढ़े यह मैं चाहता हूं तो मैं जो सहयोग दे सकता हूं वह दूंगा लेकिन उसमें पैसा नहीं दे सकता हूं। यह कह कर उसे निर्भय हो जाना चाहिए। फिर वह निर्भय होकर काम में लगता है, फिर उसे कोई झंझट नहीं रह जाती, उसे कोई प्रश्न नहीं रह जाता। उसे कोई संकोच पालने की जरूरत नहीं है क्योंकि अगर वह संकोच पालता है तो वह पच्चीस तरह के इस भय को छिपाए रखने के लिए पच्चीस और बातें करेगा और विचार करेगा और उससे कठिनाइयां खड़ी होंगी।

वह तो सीधी-साफ बात है यहां कि किसी को कोई संकोच से कुछ देना चाहिए किसी भी तरह का सहयोग, उसका तो कोई सवाल ही नहीं है। वह उसकी मित्रता का आनंद हो यह दूसरी बात है। उसके सामर्थ्य के बाहर हो, उसकी सीमा के बाहर हो, वह उलझन में हो तो उसे यह विचार ही छोड़ देना चाहिए उसे स्पष्ट कह देना चाहिए। कि मैं इसमें सहमत हूं और यह काम ठीक है और मैं इसमें साथ दूंगा लेकिन इतना जो मैं नहीं कर सकता हूं वह मैं यह नहीं कर सकता हूं। वह निर्भय हो जाएगा।

ऐसे अगर पचास निर्भय मित्र हैं तो उनके पास बड़ी शक्ति खड़ी हो जाएगी। या वह कहे कि मैं इतना दे सकता हूं उतना मैं दे दूंगा तो भी निर्भय हो जाएगा। उसमें कोई चिंता और विचार का सवाल नहीं है। ऐसे ही और ढेर सारे भय मन को अनेक-अनेक कोनों से पकड़ना शुरू कर देते हैं। तो जब कार्यकर्ताओं का वर्ग मिले अगली बार, जब हम मिलें तो इन सारी

बातों पर बहुत स्पष्ट बातें करनी चाहिए। कुछ मित्रों को किन्हीं मित्रों से कुछ शिकायतें होती हैं तो वह मुझे अलग से कहते हैं। यह मुझे पसंद नहीं है। जो भी शिकायत हो जब हम सब मित्र मिलते हैं तो हमें कह देनी चाहिए, आखिर मित्र का मतलब यही होता है। अगर उसकी कोई शिकायत है तो हम उससे कह दें कि यह हमें शिकायत है इससे काम को नुकसान पहुंचेगा या काम को बाधा पड़ेगी। तो वह सारी शिकायतों की हमें बात कर लेनी चाहिए ताकि वे साफ हो जाएं। हो सकता है हम भूल में हों, हमारी शिकायत गलत हो तो यह साफ हो जाए। हो सकता है जिस मित्र की हमने शिकायत की वह भूल में हो तो उसकी बात साफ हो जाए।

लेकिन अगर मन-मन में कहीं हमारे कुछ बातें पलती रहें तो वह दीवारें खड़ी करती हैं और जहां हमें इकट्ठा होकर खड़ा होना चाहिए वहां हम इकट्ठे होकर खड़े नहीं हो सकते।

तो एक बात यह ध्यान में लेनी है कि अगर कोई काम करना है, बड़ा काम करना है तो एक बड़े सहयोग की जरूरत पड़ेगी। तो जो-जो चीजें सहयोग में बाधा बन सकती हैं उनको तोड़ने की हमें व्यवस्था कर लेनी चाहिए। अगली बार जब भी हम मिलते हैं तो हमें बहुत आत्म आलोचना करने के लिए भी तैयार होना चाहिए। मित्रों की आलोचना करने के लिए भी तैयार होना चाहिए। उनको दूर करने के लिए हम क्या कर सकते हैं उसकी सूझ-समझ भी हमें पैदा करनी चाहिए। लेकिन अलग से बात बंद कर देनी चाहिए। और प्रत्येक को यह ध्यान रखना चाहिए कि उससे ज्यादा महत्वपूर्ण काम है, अगर उस काम में कोई बाधा पड़ती है तो उसे बदलने के लिए तैयार होना चाहिए कि मैं बदल लूं। कोई भूलचूक हो तो उसके लिए तत्काल तैयार हो जाऊं और बदलने को राजी हो जाऊं।

ये थोड़ी सी बातें अगर हम खयाल में ले लेते हैं तो कोई कारण नहीं है कि हमारी गति पूरी क्षमता से आगे क्यों न बढ़ सके। और हम जो इरादा करते हैं वह पूरा क्यों न हो सके। और न वह केवल सफल हो बल्कि सुफल भी क्यों न हो सके क्योंकि सफलता तो कई रास्तों से आ जाती है। लेकिन सुफलता कठिन बात है। अकेली सफलता तो कई तरह से आ सकती है। हजार रास्ते खोजे जा सकते हैं जो रास्ते गलत होंगे और काम को सफल बना हुआ दिखा देंगे लेकिन ऐसी सफलता की कोई आकांक्षा, कोई विचार भी नहीं करना चाहिए।

सुफल कैसे हों, जो फल आएं वे सचमुच शुभ कैसे हों। केवल फल आ जाएं इतना काफी नहीं है। एक केंद्र बन जाए, एक आश्रम बन जाए, एक विद्यापीठ बन जाए इतना काफी नहीं है। लेकिन जो हमारे इरादे हैं उनको पूरा करके बने। मेरी दृष्टि में अच्छा काम अधूरा भी हो तो भी ठीक है और बुरा काम पूरा भी हो जाए तो ठीक नहीं है। बुरा काम सफल भी हो जाए तो ठीक नहीं है अच्छा काम सपना भी रह जाए तो भी ठीक है—फिर कोई और होगा जो उस सपने को आगे बढ़ाएगा। कोई हमने ठेका तो ले नहीं रखा है कि कोई सपने को हम पूरा ही करेंगे।

लेकिन वह सपना सुंदर और शुभ है तो हम प्रयास करें और कोई समझौते के लिए नहीं तैयार होना चाहिए।

जैसे परमानंद भाई ने कहा कि वे खुश हुए कि मैं किसी खूंटे से बंध गया हूं। वे भूल में हैं। वे बिलकुल भूल में हैं। मैं किसी खूंटे से कहीं बंधता नहीं। कोई बंधने का कारण नहीं है, कोई बंधने की जरूरत भी नहीं है। बंधने का थोड़ा भी भय होता तो मैं बात ही नहीं चलाता। बंधने का चूंकि कोई भय नहीं है इसलिए मैं राजी हो गया हूं। अगर जरा भी भय होता कि इसमें बंधन खड़ा हो जाएगा मेरे लिए तो मैं राजी नहीं होता। चूंकि कोई भय नहीं है क्योंकि बंधन खड़ा ही नहीं हो सकता। इसलिए बंधन का कोई सवाल नहीं है क्योंकि मैं कोई समझौता नहीं करूंगा।

कल आप कहेंगे कि फलां आदमी एक लाख रुपए देता है तो जरा उसके धर्म के खिलाफ मत बोलें तो मैं कोई आपकी बात मानने को राजी नहीं हो जाऊंगा। कल आप कहें कि इतने लोगों ने यह काम किया है इसलिए यह बात मत कहें तो उसके लिए मैं राजी नहीं हो जाऊंगा। कहीं मैं किसी समझौते के लिए राजी नहीं हूं। कोई समझौते का सवाल ही नहीं है। इसलिए मैं तो कहीं बंधता नहीं हूं, कोई बंधन उससे खड़ा होता नहीं और मैं किसी समझौते के लिए भी राजी नहीं हूं। मैं जो कह रहा हूं वह मैं कहूंगा और उसको जोर से कहूंगा और उसको जोर से कह सकूं इसलिए यह सारा उपाय है। जो कर रहा हूं उसको जोर से कर सकूं। जितनी चोट आज करता हूं कल और जोर से कर सकूं। जितना प्रहार आज करता हूं कल और जोर से कर सकूं। उसके लिए ताकत इकट्ठी हो सके कि वह प्रहार और जोर से किया जा सके, और सबलता से।

और संन्यासी की मेरी दृष्टि ही ऐसी है कि जो सब बंधन के बीच में भी खड़ा रह कर बंधन में नहीं होता उसी को मैं संन्यासी कहता हूं। जो बंधन से भागकर और बंधन में नहीं होता वह संन्यासी अभी है नहीं। उसके मन में भय है कहीं बंध न जाए इसलिए भागा फिर रहा है। वह बंधा हुआ है इसलिए भगा फिर रहा है। उसका चित्त कहीं डरता है, कहीं अटका हुआ है। जिसका चित्त कहीं अटका हुआ नहीं है उसे कोई भय नहीं रह जाता, कोई कारण नहीं रह जाता। वह कहीं भी मन में खयाल लेने की कोई जरूरत नहीं है कि मैं कहीं बंध रहा हूं। और जो मैं कह रहा हूं वह जो मैं कल कहता रहा हूं उसकी ही तार्किक निष्पत्ति है।

कल अभी और बातें आपसे कहूंगा, परसों और बातें कहूंगा। आपकी भूमिका जैसी तैयार होती चली जाती है उतना मैं आपसे कहना शुरू करूंगा। जितने दूर तक आप जाने को राजी हो जाते हैं उससे मैं थोड़े और आगे की बात कहूंगा ताकि आप थोड़े और दूर जा सकें। शायद यही बात मैं आपसे दो साल पहले कहता तो शायद आप बंधने को राजी न होते। नहीं आपसे कहा इसलिए नहीं कि मैं बंधने को राजी नहीं था। दो साल पहले आप तैयार नहीं होते इसलिए दो साल पहले नहीं कही बात। अभी भी जो बात कही है, दो साल बाद और बात आपसे कहूंगा। जिससे आप राजी होते चले जाएंगे उतनी बात आपसे कहता चला जाऊंगा।

मेरी दृष्टि में पूरा खयाल है। लेकिन आप जिस अर्थ में तैयार होंगे उस अर्थ में उसे कहा जा सकता है अन्यथा उसे कहने का कोई कारण नहीं कोई प्रयोजन नहीं। अभी और बहुत सी क्रांतिओं में आपके मन को ले जाने की मैं तैयारी करूंगा। शायद उन क्रांतिओं में बहुत से मित्र डर जाएं और पीछे छूट जाएं। शायद उन क्रांतिओं में बहुत से लोग खयाल भी न करें कि इतनी बड़ी क्रांति की कोई बात होने को थी तो शायद हम पहले ही रुक जाते।

लेकिन जितनी बड़ी चुनौती खड़ी होती है उतना ही भीतर बल भी खड़ा होता चला जाता है। और एक मित्र छूटता है तो दस खड़े हो जाते हैं अगर चुनौती सत्य हो, वस्तुतः मनुष्य के जीवन को उससे कोई हित होने को हो। तो मैं कोई फूलों का रास्ता आपके लिए नहीं बता रहा हूं। उस पर और कांटे आने को हैं और मुझे पूरा पता है। लेकिन अगर आपके हृदय में यह खयाल आ गया हो कि देश की चेतना को और मनुष्य की चेतना को बदलने की कोई जरूरत आ गई है; आपने अपने दुख और पीड़ा से यह अनुभव किया हो चारों तरफ के उपद्रव, चारों तरफ की उच्छृंखलता, चारों तरफ का जीवन जो छिन्न-भिन्न हो गया है; सब तरफ से जिसकी सारी जड़ें हिल गइ हैं; सब तरफ कुम्हला गया है लगता हो कि इसमें कोई नए प्राण डाले जा सकते हैं तो साहस से उसके प्रति कदम उठाता जरूरी है।

जितने आप तैयार होंगे उतने बड़े साहस के लिए मैं आपसे कहना शुरू कर दूंगा। सवागीण जीवन में क्रांति हो वह मेरे खयाल में है। धर्म से मैंने चर्चा शुरू की है क्योंकि धर्म सबसे केंद्रीय तत्व है और धर्म में क्रांति करने को जो राजी हो जाता है। मेरी मान्यता है वह किसी भी चीज में क्रांति करने को राजी हो जाएगा। क्योंकि वह, वह प्राणों का केंद्रीय मोह है। अगर उस पर कोई क्रांति करने को राजी हो गया तो फिर और जिंदगी के किसी मसले पर वह डरने वाला नहीं है। इसलिए उससे बात शुरू की है। जो लोग उसके लिए राजी हैं वह और चीजों के लिए भी राजी हो जाएंगे, यह मेरी समझ है।

अंत में एक बात कहूंगा उसी संबंध में सुबह भी हम फिर चर्चा कर सकेंगे। यह सारी कारोबारी बात हुई। इस सारी बात में जैसे मैंने कल सांझ को आपसे कहा कि सेल्फ सेंटर्ड वह जो बिलकुल स्व-केंद्रित हो जाता है वह भूल है, खतरनाक है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि काम में उलझ जाना है पूरा और उसे भूल जाना है जो हम स्वयं हैं। काम भी इसलिए है ताकि दूसरों के भीतर जो स्वयं छिपा है उसकी हम उसे याद दिला सकें। तो हम उसे भूल जाएं तो खतरनाक है।

विनोबा के काम में सैकड़ों बहुत निष्ठाशील लोग आए और दस वर्षों में, बारह वर्षों के और पंद्रह वर्षों के अनुभव से सिर्फ दुख और विषाद से भरकर धीरे-धीरे वापस होने लगे। उनमें से अनेक लोगों ने मुझसे कहा कि हम जिस खयाल से आए थे, विनोबा ने तो हमें एक काम में लगा दिया। आए थे अपनी आत्म-उपलब्धि के लिए, आत्म-शांति के लिए, आत्म-ज्ञान के लिए वह खयाल तो एक तरफ रह गया और हमें एक काम में लगा दिया। ये पंद्रह वर्ष हमारे निकल गए और हमें ऐसा लगता है कि यह तो ठीक था एक दुकान वह थी जो हम करते थे। एक दुकान यह थी जो की। लेकिन इससे हुआ क्या, हमें क्या हुआ। इस संबंध में कल सुबह आपसे मुझे कहना है यह ध्यान रखना है कि आप इस काम में कितने ही

उत्सुक हो जाएं लेकिन वह गौण है। वह प्रमुख नहीं है। प्रमुख तो वह है कि आप के जीवन में आलोक, आनंद अवतरित हो। वह हो तो आप बांट सकेंगे। वह न हो तो बांट भी नहीं सकेंगे। तो हमें ऐसा कार्यकर्ता नहीं चाहिए जो साधक न हो। उस कार्यकर्ता की हमें कोई जरूरत नहीं है क्योंकि आज नहीं कल वह कार्यकर्ता दुखी होगा, परेशान होगा और सारा जिम्मा वह हम पर थोप देगा कि हमें एक काम में उलझा दिया। हम तो इसमें खो बैठे।

पूना के ही एक मित्र माणिक प्रभु विनोबा के पास गए। पहले वह रामकृष्ण मिशन में गए तो उन्होंने उन्हें एक अस्पताल में लगा दिया तो उन्होंने दो-चार वर्ष अस्पताल में सेवा की फिर उनको लगा कि भई ठीक है यह तो किसी अस्पताल में भी हम कर लेते लेकिन इससे हुआ क्या है? यह तो हम कहीं गए नहीं मैं तो वही का वही हूं। वह वहां से छोड़कर विनोबा के पास गए विनोबा ने कहा कि तू दस साल की पैदल यात्रा कर पूरे मुल्क की और मेरा साहित्य ले जा और गांव-गांव में साहित्य बांटा कर। वह बेचारे साहित्य का झोला लेकर गांव-गांव घूमने लगे। दो साल घूम चुके अभी वह, एक तीन दिन पहले जबलपुर आए और मेरे पास आए तो मैंने उनसे पूछा कि यह तो दूसरी अस्पताल शुरू हो गई। ठीक था—दो-चार साल में अनुभव किए यह तो अस्पताल है इससे हुआ क्या? तो गीता प्रवचन बेचकर क्या हो जाएगा। या मैं तुमसे यह गीता प्रवचन छीन लूं और साधना पथ पकड़ा दूं और क्रांतिबीज पकड़ा दूं कि जाओ इसको गांव-गांव बेचो दस साल तक। क्या होगा?

मैंने उनको कहा कि जैसे वह अस्पताल के दिन फिजूल गए ये भी दस साल फिजूल चले जाएंगे। अगर यह खयाल न हो आपको कि यह गौण है और केंद्र की बात कुछ और है और उसे भूल नहीं जाना। नहीं तो क्या पहुंचाएंगे? लोगों तक पहुंचाने का सवाल कहां है? तो साधक प्रथम है और उसका कार्यकर्ता होना एकदम द्वितीय है और अगर दोनों में से खोना हो तो कार्यकर्तापन को खो देना। साधकपन को मत खोना।

तो इस संबंध में कल सुबह आपसे बात करूंगा क्योंकि अंतिम जाने के पहले वह बात कर लेनी जरूरी है। नहीं तो इन तीन-चार बैठकों से कहीं आप एकदम कार्यकर्ता हो कर लौट जाएं तो भारी नुकसान हो गया वह फिर, वह तो बहुत भारी नुकसान हो गया। तो कल सुबह उसके बाबत हम बैठकर बात कर लेंगे।

लेकिन यह ध्यान में रहना चाहिए कि साधक हैं आप, कार्यकर्ता होना बिलकुल गौण बात है। अगर वह खोती हो तो खो सकती है लेकिन साधक होना नहीं खो सकता। किसी मूल्य पर नहीं खो सकता। साधक होते हुए अगर कोई काम आपसे बन सकता है उसे जरूर करें, उसे जरूर पहुंचा दें। आत्मा रहे तो शरीर रह सकता है शरीर अकेला रह जाए तो उसका कोई मूल्य नहीं है।

हिंदुस्तान में यह भूल बहुत दफे हो चुकी है रोज होती है और आप जल्दी से कार्यकर्ता बन सकते हैं यह मैं जानता हूं। यह कठिनाई नहीं है एकदम सरल बात है। सवाल तो साधक बनने का कठिन है कार्यकर्ता बनने का तो एकदम सरल है उसमें क्या कठिनाई है। वह दूसरा काम न करके ये काम आप कर लेंगे। इससे कोई फर्क नहीं पड़ने वाला बहुत लोग मिल जाएंगे आपको जोकि काम करने को एकदम तैयार हो जाएंगे लेकिन ध्यान रहे क्रिया अक्रिया के केंद्र पर हो तो ही अर्थपूर्ण है तो ही आध्यात्मिक है नहीं तो नहीं। तो वह जो हम केंद्र भी बना रहे हैं वह अक्रिया सिखाने को बना रहे हैं। तो कहीं ऐसा न हो आप कार्यकर्ता हो जाएं तो तो मामला खतम हो गया उस केंद्र को बनाकर हम क्या करेंगे। वह फिजूल हो जाएगा। उसका कोई मूल्य नहीं रह जाएगा। उसकी बात हम कल सुबह करेंगे।

वर्कर्स केंप

दिनांकः 9.4.68

इस देश के दुर्भाग्य की कथा बहुत लंबी है। समाज का जीवन, समाज की चेतना इतनी कुरूप, इतनी विकृत और विक्षिप्त हो गई है जिसका कोई हिसाब बताना भी कठिन है। और ऐसा भी मालूम पड़ता है कि हमारी संवेदनशीलता भी कम हो गई है—यह कुरूपता हमें दिखाई भी नहीं पड़ती। जीवन की यह विकृति भी हमें अनुभव नहीं होती! और आदमी रोज-रोज आदमियत खोता चला जाता है, उसका भी हमें कोई दर्शन नहीं होता।

ऐसा हो जाता है। लंबे समय तक किसी चीज से परिचित रहने पर मन उसके अनुभव करने की क्षमता, सेंसिटिविटी खो देता है। बल्कि उलटा भी हो जाता है; यह भी हो जाता है कि जिस चीज के हम आदी हो जाते हैं वह तो हमें दिखाई ही नहीं पड़ती और कोई ठीक चीज हमें दिखाई पड़े तो वह भी हमें दिखाई पड़नी मुश्किल हो जाती है।

एक मछली बेचने वाला आदमी एक सुगंधियों के बाजार से गुजरता था। उसे मछलियों की बास की आदत थी; सुगंध का कोई अनुभव न था। जैसे ही उसे सुगंध आनी शुरू हुई उसने कपड़े से अपनी नाक बंद कर ली; सोचा कि बड़ी तकलीफ है यहां कैसी दुगंध चली आती है! वह बाजार तो सुगंध का था। उस देश की कीमती से कीमती सुगंध, परफ्यूम वहां बिकती थी। जैसे-जैसे वह बाजार के भीतर चला उसके प्राण छटपटाने लगे। फिर वह बेहोश होकर गिर पड़ा। दुकानदार दौड़कर आ गए। उन्होंने सोचा कि शायद थक गया है, गर्मी से पीड़ित है। तो उन्होंने अच्छी सुगंधियां लाकर उसे सुंघानी शुरू कीं कि शायद होश आ जाए।

अब उन बेचारों को पता भी नहीं कि वह सुगंध से ही पीड़ित होकर बेहोश हो गया है। जैसे-जैसे वे उसे सुगंध सुंघाने लगे वह और हाथ-पैर छटपटाने लगा। वे और सुगंध सुंघाने लगे।

तभी वहां से एक दूसरा मछुआ गुजरता था। उसने कहा ठहर जाओ, उस आदमी के हाथ के झोले को देखते हो? उसकी टोकरी देखते हो? वह कोई मछुआ है मैं भली-भांति जानता हूं। हटो, हटा दो अपनी सुगंधियों को।

उसने उसकी टोकरी को, जिसमें वह मछलियां बेचकर लौट रहा है, थोड़ा सा पानी छिड़क दिया और टोकरी उसकी नाक के पास रख दी। उसने आंख खोली और कहा दिस इज़ रिअल परफ्यूम यह है सुगंध असली। पागल न मालूम क्या-क्या सुंघा रहे थे मुझे।

समाज की संवेदनशीलता भी इसी तरह मर जाती है। इस देश में ऐसा हुआ। इस देश में कोई सैकड़ों वर्षों के चिंतन ने मनुष्य को सामूहिक चेतना, सोशल कांशसनेस से बिलकुल ही तोड़ दिया। हिंदुस्तान की सारी शिक्षाएं व्यक्ति को निपट स्वार्थी बनाती हैं, उसे सामूहिक चेतना का अंग नहीं बनातीं। इस जमीन पर वह आदमी अपने लिए धन कमाता है, अपने लिए मकान बनाता है; परलोक में अपने मोक्ष को खोजता है, अपने स्वर्ग को खोजता है। दूसरे से कोई संबंध नहीं है।

अगर हिंदुस्तान के शिक्षकों ने यह भी समझाया है कि दूसरों पर दया करो, दूसरों को दुख मत दो, तो उसका भी कारण यह नहीं है कि दूसरों को दुख देना बुरा है। उसका कारण यह है कि दूसरों को तुम दुख दोगे तो नर्क चले जाओगे। दूसरों को दुख न दोगे तो स्वर्ग चले जाओगे। बेसिक मोटिव, जो बुनियादी प्रेरणा है वह मैं स्वर्ग कैसे चला जाऊं, मैं मोक्ष कैसे पा लूं यह है—दूसरे को दुख मत दो इसमें कोई बुनियादी बुराई नहीं है, बुराई इसमें है कि कहीं मेरा मोक्ष न खो जाए।

हिंदुस्तान में अहिंसा की इतनी बातें हुइ लेकिन हिंदुस्तान में प्रेम की कोई प्रक्रिया विकसित नहीं हो सकी। इस अहिंसा की शिक्षा में कोई बुनियादी भूल रही होगी। अहिंसा की शिक्षा कहती है हिंसा मत करो क्योंकि हिंसा करने से स्वर्ग खोता है, मोक्ष खोता है; हिंसा करने से पाप लगता है, पाप बंधन में ले जाता है।

अहिंसा की शिक्षा यह नहीं कहती कि दूसरे आदमी को दुख पहुंचता है इसका विचार करो, कि दूसरे के प्रति प्रेम करो ताकि उसको दुख न पहुंच सके। दूसरे का चिंतन नहीं है अहिंसा की शिक्षा में, अपना ही चिंतन है, मेरे ही अहंकार का, मेरे ही स्वार्थ का अंतिम चिंतन है। इसलिए हिंदुस्तान में सबसे पहले दुनिया में अहिंसा की शिक्षा खोज ली गई लेकिन हिंदुस्तान में प्रेम का कोई भी पता नहीं है। यह बड़े आश्चर्य की बात है। हम इतनी अहिंसा की बात करते हैं, हम से ज्यादा प्रेमशून्य लोग पृथ्वी पर कहीं भी नहीं हैं। कुछ बात है।

हमारी अहिंसा की शिक्षा भी बुनियाद में मेरे हित पर खड़ी हुई है। दूसरे का कोई चिंतन उसमें नहीं है। अगर हमें पता चल जाए कि दूसरे को कष्ट देने से स्वर्ग जाने में फिर कोई बाधा नहीं पड़त्ती तो हम कष्ट देने में कोई परेशानी अनुभव नहीं करेंगे। और अगर हमें यह पता चल जाए कि दूसरे को कष्ट देने से स्वर्ग जाने में सुविधा मिलती है तो हम पूरी तरह से कष्ट देने को तैयार हो जाएंगे।

'मेरा' हित, हमारी सांसारिक शिक्षा का भी आधार है, हमारी धार्मिक शिक्षा का भी आधार है। और मेरी दृष्टि में वह व्यक्ति साधना के रास्ते पर आगे बढ़ता है जो 'मेरे' के भाव को खोता है और सबके, 'हम' के भाव को स्वीकार करता है।

ईश्वर की तरफ जाने की विधि 'मैं' को छोड़कर 'हम' की तरफ जाने की विधि है।

हम कितने वृहत्ततर जीवन के हित और सुख के लिए सोचते हैं...। और यह तो सहज ही घटित हो जाता है कि जो व्यक्ति जितने वृहत्ततर जीवन के हित और सुख के लिए सोचता है उसके अपने दुख तत्क्षण विलीन हो जाते हैं क्योंकि दुखों की एक बुनियाद सेल्फ कांशसनेस है। दुखों की एक आधारशिला यह है कि मैं अपने प्रति कितना सचेत हूं।

एक सम्राट बीमार पड़ा था। कोई चिकित्सा नहीं हो सकी। मरने के करीब पहुंच गए। सब चिकित्सक हार गए। और तब किसी ने कहा कि दूर इस गांव के बाहर एक संन्यासी है शायद वह कोई रास्ता बता दे। उस संन्यासी को लिवा लाया गया। उस संन्यासी ने कहा कि नहीं, मैं रास्ता नहीं बता सकूंगा। रास्ता तो बड़ा सरल है लेकिन मैं बता नहीं सकूंगा। मुझे क्षमा कर दें।

सम्राट कहने लगा कि रास्ता जब सरल है तो बता क्यों न सकेंगे? उसने कहा, रास्ता तो मैं बता दूंगा—सरल भी है—लेकिन आप कर नहीं पाएंगे बहुत कठिनाई खड़ी हो जाएगी। लेकिन बच सकते हैं आप, मौत निश्चित नहीं है।

सम्राट ने पैर पकड़ लिए। कहा, रास्ता बता दें। दरबारी, रानियां, सारी राजधानी हाथ जोड़कर खड़ी हो गई कि आप जाएं न, बता दें। उसने कहा, नहीं आप मानते हैं तो मैं बात देता हूं: दस हजार बच्चों की गर्दन कटवानी पड़ेगी और उनके खून से स्नान करवाना पड़ेगा तो सम्राट बच जाएगा। मैं जाता हूं। मैं और कुछ ज्यादा नहीं कह सकता। सम्राट बच सकता है। लेकिन फलां तारीख तक दस हजार बच्चे इकट्ठे कर लें। फलां तारीख को फलां समय उनकी गर्दनें काट दें, ताजे खून से नहला दें सम्राट बच जाएगा।

छह महीने थे उस तारीख को अभी। सम्राट ने कहा कि नहीं मैं नहीं बचना चाहता हूं। दस हजार बच्चे काटने पड़ें। और फिर एक अजनबी फकीर, इसकी बात का भरोसा क्या? मैं बचूं या न बचूं दस हजार बच्चे तो कट जाएंगे। फिर मैं बच भी जाऊंगा तो कितने दिन बचूंगा, आखिर मुझे मरना पड़ेगा। फिर मैं तो बूढ़ा हो गया, दस हजार बच्चे जिनका जीवन अभी शेष है उन्हें कैसे समाप्त कर दूं? लेकिन परिवार के लोग समझाने लगे, दरबारी समझाने लगे, राजधानी के बुद्धिमान समझाने लगे कि तुम्हारा एक जीवन दस हजार बच्चों के जीवन से ज्यादा कीमती है। तुम हो तो दस हजार बच्चे नहीं दस करोड़ बच्चे सुरक्षित हैं इस देश में। तुम जिस दिन नहीं हो उस दिन किसी का भी जीवन सुरक्षित नहीं है। वह इतना प्यारा राजा था, इतना बुद्धिमान, इतना दया से, करुणा से भरा कि सारे देश ने प्रार्थना की कि दस हजार बच्चों की हम फिकर नहीं करते हैं। हम तुम्हें बचाना चाहते हैं।

मजबूरी में राजा को राजी हो जाना पड़ा। बच्चे इकट्ठे किए जाने लगे। महल छोटे-छोटे खूबसूरत बच्चों से भरने लगा। राजा की नींद समाप्त हो गई। राजा दिन-रात सोचने लगा कि यह मैं क्या करवा रहा हूं, यह क्या हो रहा है?—रात-दिन बच्चे ही बच्चे दिखाई पड़ने लगे। दस हजार बच्चे गांव-गांव से आने लगे। और गांव-गांव में लोग भगवान से प्रार्थना करने लगे कि राजा पहले ही ठीक हो जाए तो बच्चे बच जाएं। कोई गाली देने लगा कि यह राजा कैसा है, यह मर जाए उस तारीख से पहले तो ये बच्चे बच जाएं। सारे देश में एक ही चिंता, और राजा के प्राणों में एक ही चिंता।

छह महीने पूरे हो गए, वह दिन आ गया। दस हजार बच्चे इकट्ठे हो गए। आज सुबह होते ही, भोर होते ही उनकी गर्दनें काट दी जाएंगी। वह महल के द्वार पर बाहर दस हजार बच्चे पंक्तिबद्ध खड़े कर दिए गए। नंगी तलवारें सूरज की रोशनी में चमकने लगीं। वह राजा नीचे आया। उसने उन बच्चों को एक कतार से देखा एक तरफ। वक्त आ गया, तलवारें उठ गइ और बच्चे काट दिए जाएंगे। तभी वह राजा चिल्लाया कि नहीं, कोई बच्चा नहीं काटा जाएगा। मैं मरने को तैयार हूं। बच्चे रोक दिए गए।

और राजा ठीक हो गया। बड़ी हैरानी हुई कि राजा ठीक कैसे हो गया। राजा की बीमारी खतम हो गई। उस फकीर को बुलवाया गया कि बीमारी कैसे ठीक हो गई, बच्चे तो रोक दिए गए।

उस फकीर ने कहा, कुल एक कारण है—छह महीने तक राजा अपनी बीमारी के संबंध में सोच ही नहीं सका। बच्चे मर जाएंगे, इतने बच्चे मर जाएंगे। एक ही चिंतन। अपने से बाहर चला गया चिंतन, सेल्फ से बाहर चला गया, मैं के बाहर चला गया। वह जो चिंतन मैं पर रुका हुआ था, वही पीड़ा थी, वही कष्ट था, वही दुख था।

एक आदमी सो नहीं पाता है फिर उसकी बीमारी ठीक नहीं हो पाती है। चिकित्सक कहते हैं इसे नींद आ जाए तो ठीक हो जाएगा। नींद से बीमारी के ठीक होने का क्या संबंध है? कोई भी संबंध नहीं है। सिर्फ एक संबंध है। नींद में भूल जाता है कि मैं बीमार हूं। और कोई भी संबंध नहीं है। नींद में डिसकंटीन्यूटी हो जाती है इस खयाल की कि मैं बीमार हूं। मैं के बाहर नींद में आदमी चला जाता है। इसलिए नींद जरूरी है, नहीं तो आदमी पागल हो जाएगा।

'मैं' तो पागलपन का केंद्र है, वह तो मैडनेस का सीक्रेट है। पागल होना हो तो मैं और मैं और मैं...। मैं के बाहर जाना जरूरी है नहीं तो आदमी पागल हो जाएगा। इसलिए नींद जरूरी है। और जिस मुल्क में नींद कम हो जाएगी वहां शराब जरूरी हो जाएगी क्योंकि उतनी देर के लिए आदमी भूल सकता है और कोई रास्ता नहीं है। लेकिन शराब और नींद और बेहोशी वास्तविक चीजें नहीं हैं जिनसे कोई भूल सके क्योंकि कंटीन्यूटी फिर शुरू से जाती है। शराब कितनी देर रहेगी? फिर होश आ जाएगा, फिर शुरू हो जाएगा; नींद खुल जाएगी, फिर शुरू हो जाएगा।

लेकिन एक ऐसी आध्यात्मिक प्रक्रिया भी है उसको प्रेम कहते हैं। उस प्रक्रिया को कि प्रेम में जो आदमी प्रविष्ट हो जाता है वह मैं के सतत बाहर हो जाता है।

मैं क्यों यह बात कहना चाहता हूं? यह मैं इसलिए कहना चाहता हूं कि साधक अकेला अगर साधक है तो अहंकार के बाहर नहीं हो सकेगा, कभी नहीं हो सकेगा क्योंकि सारी साधना का केंद्र ही उसका मैं है कि मैं कैसे शांत हो जाऊं, मैं कैसे मुक्त हो जाऊं, मैं कैसे मोक्ष चला जाऊं। लोग मेरे पास आते हैं वे कहते हैं मैं कैसे शांत हो जाऊं। मैं उनसे कहता हूं तुम्हें इतनी दुनिया अशांत है इसके बीच तुम्हें एक ही खयाल आ रहा है कि मैं कैसे शांत हो जाऊं? और तुम्हें पूछते शरम भी नहीं आती?

यह बंबई पूरी की पूरी बीमार पड़ी हो, लोग खाटों पर पड़े हों, एक आदमी स्वस्थ न हो और मैं कहूं मैं स्वस्थ कैसे हो जाऊं तो मुझे आप क्या कहेंगे पत्थर, या आदमी? ये सारे लोग भूखे हों और मैं कहूं कि मुझे अच्छा भोजन कैसे मिल जाए तो मुझे आप क्या कहेंगे?

इतने अशांत जीवन के तलों में, इतने रुग्ण समाज में जब एक आदमी पूछने लगता है मैं कैसे शांत हो जाऊं, मैं कैसे सत्य को पा लूं, मैं कैसे मोक्ष को चला जाऊं तो निश्चित समझ लेना कि न तो यह कभी सत्य पा सकेगा, न कभी शांत हो सकेगा, न इसके लिए कोई मोक्ष हो सकता है कहीं। और अगर ऐसे लोगों के लिए मोक्ष होता हो तो महावीर, बुद्ध, और कृष्ण, और क्राइस्ट जैसे लोग उस मोक्ष में जाने से पहले ही इनकार कर चुके होंगे। उसके भीतर कदम नहीं रखा होगा उन्होंने। ऐसे आदमी जिस मोक्ष में जा सकते हों उस मोक्ष में भले आदमियों के लिए कोई जगह नहीं हो सकती।

एडमंड बर्ग से किसी ने पूछा कि तुम तो ईश्वर को नहीं मानते हो, मंदिर में प्रार्थना नहीं करते हो, पूजा नहीं करते हो, तुम्हें कभी धर्मशास्त्र की बात करते नहीं सुना, क्या तुम स्वर्ग जा सकोगे? एडमंड बर्ग ने कहा कि अगर अच्छे लोगों को स्वर्ग में जगह मिलती होगी तो मुझे मिल जाएगी और अगर बुरे लोगों को स्वर्ग में जगह मिलती हो तो मैं वहां जाना भी नहीं चाहूंगा। और उस आदमी ने कहा कि मैं तो समझता यूं हूं कि जहां दस अच्छे लोग इकट्ठे हो जाएंगे वहां नर्क भी होगा तो बहुत दिन तक नर्क नहीं रह सकता वह स्वर्ग बन जाएगा। और जहां दस बुरे लोग इकट्ठे हो जाएंगे उसका नाम अगर स्वर्ग भी हो तो तख्ती भर स्वर्ग की रह जाएगी, दस दिन बाद वहां नर्क खड़ा हो जाएगा। तो उसने कहा मैं नहीं कहता मैं स्वर्ग जाना चाहता हूं। मैं वहां जाना चाहता हूं जहां अच्छे लोग हैं, जहां प्रेम करने वाले लोग हैं। मैं वहां जाना चाहता हूं। वहां स्वर्ग होगा।

लेकिन प्रेम करने वाले लोग इस मुल्क में नहीं हैं, इसलिए हमने एक नर्क बना लिया है।

मैं जो बातें कह रहा हूं वह साधना के नाम पर, मोक्ष के नाम पर धर्म के नाम पर, जो भी चलता रहा है उस चुकता को तोड़ने और बदल देने की बातें हैं। एक बड़ी क्रांति लाने का विचार और खयाल उनमें है। हम, मुल्क की चेतना अब तक जिन केंद्रों पर घूमती रही है, उन सारे केंद्रों को बदल दें क्योंकि उन केंद्रों पर घूमने के कारण ही यह परिणाम हुआ है जो हमें दिखाई पड़ रहा है। यह परिणाम आकस्मिक नहीं है। एक-एक चीज जुड़ी हुई है।

हिंदुस्तान एक हजार साल तक गुलाम रहा, यह आकस्मिक नहीं है। हिंदुस्तान में सामूहिक चेतना ही नहीं है। गुलाम नहीं रहेगा तो क्या होगा? आजाद हो गया यह मिरेकल है, यह चमत्कार है। यह आजादी बड़ी बेबूझ है—यह किसी की कृपा होगी, यह कोई अंतर्राष्ट्रीय स्थितियों का कारण होगा। हमारी कोई पात्रता नहीं है, हमारे पास समूह का कोई भाव नहीं है।

सामूहिक आत्मा—हमारे पास ऐसी कोई चीज नहीं है। मैं मैं, आप आप, वो वो—मुझे अपने रास्ते जाना है, आपको आपके रास्ते जाना है, उसको उसके रास्ते जाना है। और हमें पता ही नहीं है कि हमारे रास्ते एक-दूसरे को काटते हैं। मैं अपने रास्ते जाता हूं तो आपको रोकता हूं, आप अपने रास्ते जाते हैं तो मुझे रोकते हैं।

हम यहां सारे लोग अभी निकलना शुरू कर दें इस दरवाजे से...। हम सब निकलना चाहेंगे और हम सबके निकलने की आकांक्षा हम सबको रोकने का कारण बन जाएगी। लेकिन नहीं, हम एक-एक होकर निकल जाते हैं, हम ठहर जाते हैं, रास्ता देते हैं दूसरे को और हम सब निकल जाते हैं।

जब मैं किसी दूसरे को निकलने का रास्ता देता हूं तो मैं अपना रास्ता भी निश्चित ही बना लेता हूं। लेकिन जब मैं अपना ही रास्ता खोजता हूं तो मैं अपना रास्ता भी तोड़ता हूं, दूसरे का रास्ता भी तोड़ता हूं।

जीवन एक सामूहिक उपक्रम है। तो भारत को धर्म की एक सामूहिक दृष्टि पैदा करनी है। साधना को समाज से जोड़ देना है। व्यक्ति को समूह-चेतना के विरोध में खड़ा नहीं करना है, उसे व्यक्ति को समूह-चेतना के संयोग में, संयुक्तता में खड़ा करना है। यह कौन करेगा? यह कैसे होगा? यह पांच हजार साल के गलत और भ्रांत केंद्र कैसे तोड़े जाएंगे। यह कोई मेरे वश की बात नहीं है।

यह किसी एक आदमी के वश की बात नहीं हो सकती। यह कोई एक दिन का काम नहीं हो सकता। लेकिन कमजोर से कमजोर दस लोग भी संयुक्त हो जाएं और किसी दिशा में काम शुरू कर दें तो आज जो छोटा सा बीज है वह कल बड़ा वृक्ष बन जाए तो बहुत आश्चर्य नहीं है।

और यह तो हमें खयाल नहीं करना चाहिए...। मौसमी पौधे लगाए जाते हैं तो दो महीने के भीतर फूलों से लद जाते हैं। लेकिन दो महीने के बाद जमीन साफ होती है, न वहां फूल होते हैं न पौधे होते हैं। जिन्हें बड़े पौधे लगाने हैं—जिनके नीचे हजारों लोग छाया ले सकें—उन्हें यह खयाल छोड़ देना चाहिए कि वे वृक्ष मैं ही लगा लूंगा, मेरी ही जिंदगी में लगा लूंगा। मेरे ही सामने हजारों लोग छाया ले लेंगे यह पागलपन की बात छोड़ देनी चाहिए। यह भी अहंकार का ही हिस्सा है।

लेकिन हमें काम शुरू कर देना चाहिए, छोटा सा सही। और स्मरण रखें, इस जगत में छोटी से छोटी चीज का मूल्य है। इतना मूल्य है जिसका कोई हिसाब नहीं। क्योंकि अंतिम निर्णय में, वह जो अल्टीमेट कनक्लूज़न होगा जिंदगी का, उसमें छोटी और बड़ी चीज में फर्क नहीं रह जाएगा। उसमें छोटी चीज ने अपने फर्ज अदा किए हैं। एक इतनी छोटी सी घटना का मूल्य होता है जिसकी हम कल्पना नहीं कर सकते हैं।

नेपोलियन छह महीने का था और एक बिस्तर पर लेटा हुआ था। एक जंगली बिल्ली आ गई और उसकी छाती पर चढ़ गई। आप सोच सकते हैं एक जंगली बिल्ली का दुनिया के इतिहास के बनाने में कोई हाथ हो सकता है? या एक छोटे से बच्चे की छाती पर एक बिल्ली का चढ़ जाना हिस्टॉरिकल इम्पॉरटेंस ले सकता है, कोई ऐतिहासिक मूल्य हो सकता है इस बात का? कोई भी मूल्य नहीं है। नौकर ने आकर बिल्ली को भगा दिया। लेकिन छह महीने के नेपोलियन के मन में बिल्ली का भय हमेशा के लिए समा गया। फिर वह नंगी तलवार से जूझते आदमी से नहीं डरता था, शेर से नहीं डरता था लेकिन बिल्ली के सामने उसके प्राण कंप जाते थे।

जिस लड़ाई में नेपोलियन हारा, नेलसन, उसका दुश्मन सत्तर बिल्लियां अपनी फौज के सामने बांधकर ले गया था। बिल्लियों को नेपोलियन ने देखा और उसके प्राण कंप गए। और उसने अपने साथियों से कहा आज जीत बहुत मुश्किल है, बिल्लियां देखते से ही मैं वश में नहीं रह जाता। वह पहली बार हारा। ऐतिहासिक कहते हैं कि नेपोलियन को नेलसन ने हरा दिया। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि बिल्लियों ने हरा दिया। और मैं मनोवैज्ञानिकों से सहमत हूं, ऐतिहासिक कुछ भी नहीं जानते।

इतनी छोटी सी, फिजूल की घटना, मीनिंगलेस, इतना बड़ा परिणाम ला सकती है क्या? और नेपोलियन के हारने से क्या फिर हुआ इसके लिए तो बहुत...। अगर नेपोलियन नहीं हारता तो क्या होता? दुनिया बिलकुल दूसरी होती। अगर हिटलर नहीं हारता तो दुनिया दूसरी होती। नेपोलियन नहीं हारता तो दुनिया दूसरी होती। नेपोलियन नहीं हारता अगर बिल्ली उसकी छाती पर न चढ़ती। एक बाहर बैठा हुआ नौकर बिल्ली को भगा सकता था, दुनिया का इतिहास दूसरा होता। कोई कभी सोचता नहीं कि एक नौकर के द्वारा एक बिल्ली को भगा दिया जाना इतना मूल्यवान हो सकता है।

जीवन के इस वृहत्तर संबंध में, यह जो इनर कॉरसपॉडेंस ऑफ थिंग्स है, यह जो जीवन की सारी चीजों का अंतस□बंध है इसमें छोटी सी चीज का उतना ही मूल्य है जितना बड़ी से बड़ी चीज का। उसमें एक सूरज का और एक दीए के मूल्य में कोई फर्क नहीं है। कई बार दीया सूरज से ज्यादा मूल्यवान साबित हो सकता है और कई बार सूरज दीए से छोटा साबित हो सकता है। जिंदगी का गणित बहुत बेबूझ है। छोटे से काम के बड़े परिणाम हो सकते हैं। और काम अगर ठीक दिशाओं में चले...।

इतना ही आश्वासन ले सकते हैं अपने मन में कि कोई ठीक दिशा में काम को हमें ले जाना है। अगर हिम्मत से थोड़े से मित्र इकट्ठे होकर किसी काम में लगते हैं तो कोई आश्चर्य नहीं कि दस-पंद्रह वर्ष के भीतर सारे मुल्क की नैतिक चेतना में एक आंदोलन उपस्थित किया जा सके।

चेतना तैयार है आंदोलन के लिए। जैसे कोई घर बिलकुल तैयार हो जल जाने के लिए, सिर्फ एक चिंगारी डालने की जरूरत हो। कोई भी यह चिंगारी डालेगा तो यह आग लग जाएगी। और अगर यह आग लग जाए तो मन के प्राण नए हो सकते हैं, निखर सकते हैं।

गांव-गांव मैं घूम रहा है, लाखों लोगों से मिल रहा हूं। उनकी आंखों से, उनके प्राणों से, उनकी बातों से मुझे लगता है कि वे तैयार हैं। कोई पुकारे, कोई चिंगारी फेंके, कोई कहे...। चीजें अपने आप मर जाती हैं, कभी धक्का देने भर की जरूरत होती है। क्या बचा है?

पुरानी परंपरा की कोई भी चीज जीवित नहीं है, सिर्फ मुर्दे खड़े हैं। कोई धक्का दे दे और वे गिर जाएंगे। वे मुर्दे इनकार भी करने की हैसियत में नहीं रह गए हैं कि वे यह कह दें कि हम नहीं गिरते हैं या हमको मत गिराओ। जो उनको पकड़े खड़े हैं वे भी सोचते हैं कि कोई गिरा दे तो हमारा पकड़ने की झंझट से छुटकारा हो जाए। लेकिन वे भी बल नहीं जुटा पा रहे हैं कि खुद छोड़ दें सहारा। प्रतीक्षा कर रहे हैं कि कोई करे, कोई करे...। और इस प्रतीक्षा में जीवन रोज नीचे से नीचे गिरता जाता है और सड़ता चला जाता है।

इस दिशा में थोड़ा सोचें। कोई बंधे हुए फामूर्ले नहीं हैं जिनके आधार पर कोई काम करना है। कोई संप्रदाय नहीं, कोई संगठन नहीं, कोई पंथ नहीं। लेकिन कुछ सूत्र, कि मुल्क में विश्वास की जगह विचार पैदा करना है। कौन सा विचार, वह मैं नहीं कहता। कौन सा विचार तो संप्रदाय बनना शुरू होगा—कि जैनियों का विचार, कि हिंदुओं का, कि मुसलमानों का। नहीं, मैं कहता हूं विश्वास की जगह विचार।

संप्रदाय का कोई सवाल नहीं है। संप्रदाय का कोई सवाल नहीं है क्योंकि संप्रदाय का तब सवाल होता है जब हम कहें कि यह विचार। नहीं, यह तो सवाल ही दूसरा है। यह सवाल है कि श्रद्धा नहीं विचार पैदा करना है; अंधविश्वास नहीं आंखें पैदा करनी हैं। अतीत की तरफ देखना नहीं है, वर्तमान के प्रति और भविष्य के प्रति उन्मुख होना है; यह कि व्यक्ति को अहंकार पर केंद्रित नहीं बल्कि सर्व के प्रति समर्पित होना है। साधक को सिर्फ साधक नहीं बल्कि समग्र की चेतना का भी ध्यान रखना है क्योंकि अंततः मैं अकेला नहीं हूं, आप अकेले नहीं हैं। हम किसी वृहत्तर इकाई में जुड़े हैं। आपकी अशांति अंततः मेरी अशांति होगी और मेरी अशांति अंततः आपकी अशांति होगी।

यह सारी दृष्टि—पंथ नहीं—यह केवल विचार की तीव्र उत्तेजना, एक हवा कि मुल्क में एक हवा बह जाए विचार की। फिर तो विचार करने वाले बच्चे रास्ता खोज लेंगे, बना लेंगे। यह नहीं कहना है कि तुम कहां जाओ। इतना ही अगर हम कर सकें, कह सकें कि जहां तुम जाते रहे हो वहां तुम कहीं पहुंचे नहीं। रुक जाओ, एक क्षण खड़े होकर देख लो कि पांच हजार

साल में जो यात्रा तय की है उसने तुम्हें कहां पहुंचाया है। बस इतना हम काम कर सकें कि रुक जाओ एक क्षण और देख लो तो दिखाई उन्हें स्वयं पड़ने लगेगा। लेकिन रुक ही नहीं रहा है कोई, रोक नहीं रहा है कोई।

तो मुल्क में एक आंदोलन...। आंदोलन दुनिया में चलते हैं, क्रांतियां चलती हैं। लेकिन बुनियादी क्रांति और बुनियादी आंदोलन नहीं चलते हैं। एक पंथ से कोई छुड़ाता है तो दूसरे पंथ से बांधने की कोशिश करता है। छुड़ाता इसलिए है कि दूसरे में बांध सके। लेकिन मेरी दृष्टि में हमें ऐसा मनुष्य पैदा करना है जो किसी पंथ से बंधने में असमर्थ हो जाए। ऐसी फ्रीडम, ऐसी स्वतंत्रता पैदा करनी है। यह सामर्थ्य अगर हम पैदा नहीं करेंगे तो स्वच्छंदता पैदा होगी ही।

स्वतंत्रता तो एक डिसिप्लिन है, एक अनुशासन है, चेतना का एक ढंग से विकास है। और स्वच्छंदता परतंत्रता के प्रति पागल विद्रोह है। तो अगर हम स्वच्छंदता पैदा न करना चाहते हों तो हमें स्वतंत्रता की दिशा में जीवन की चेतना को विकसित करना है। और अगर हम चुप बैठे रहे तो स्वतंत्रता तो नहीं आएगी—परतंत्रता तो जाएगी—उसकी जगह आएगी स्वच्छंदता और जीवन के सब सूत्र बिखर जाएंगे, सब गड़बड़ हो जाएगा। उसके पहले होश से भर जाना जरूरी है।

तो मैं तो इतना ही कर सकता हूं कि गांव-गांव जाकर लोगों को कहूं कि घर में आग लगी है तुम जाग जाओ। लेकिन मैं कितनी दूर तक लोगों को चिल्लाकर खबर पहुंचा सकता हूं? यह तो बात ऐसी है कि एक-एक घर के छप्पर पर खड़े होकर पूरे गांव में कहने की है, पूरे मुल्क में कहने की है, पूरी दुनिया में कहने की है। तो उसके लिए मित्रों को आमंत्रण दिया जाना जरूरी है कि जिनको भी प्रीतिकर लगता हो और जिस ढंग से प्रीतिकर लगता हो...।

कोई बंधा हुआ ढांचा नहीं है कि वे कैसे...। जिस ढंग से उन्हें प्रीतिकर लगता हो, जिस दिशा में उन्हें लगता हो कि मैं कुछ कर सकता हूं, कोई चिनगारी पहुंचा सकता हूं वे पहुंचाएं।

और उन्हें लगता हो कि जीवन जागृति केंद्र के साथ, तो साथ; अगर उन्हें लगता है अलग, तो अलग। अगर उन्हें लगता हो कि ये जो मित्र इकट्ठे हैं इनके साथ कुछ काम हो सकता है तो इनके साथ। इनके साथ लगता हो कि नहीं हो सकता, कोई दस मित्र अलग खड़े होते हों अलग तो अलग। सवाल यह है ही नहीं कि कौन के साथ और कैसे। सवाल यह है कि काम। न कोई नाम का सवाल है, न कोई व्यवस्था का, न कोई ॲफिलिएशन का।

जिनको जैसा लगता हो वैसा। अगर उन्हें लगता हो कि ये जो दस-पचास मित्र जीवन जागृति केंद्र के नाम से इकट्ठे हैं इनके साथ काम को गति दी जाए तो दें। अगर उन्हें कल लगे कि नहीं, ऐसा नहीं हो सकता तो काम मूल्यवान है, क्रांति मूल्यवान है। न जीवन जागृति केंद्र का कोई मूल्य है, न मेरा कोई मूल्य है।

अगर मेरे साथ लगता हो कि यह काम हो सकता है तो ठीक। लगता हो कि मैं खतरनाक हूं, काम को रोकूंगा तो मुझे तत्क्षण छोड़ देना चाहिए। क्रांति मूल्यवान है, न व्यक्तियों का कोई मूल्य है, न पंथों का कोई मूल्य है, न संगठनों का कोई मूल्य है। लेकिन एक क्रांति जरूर मुल्क में आनी चाहिए, इसकी प्यास अगर आपको लगती हो, प्रतीत होता हो कि आनी चाहिए तो कुछ करें। वह किस रूप में आप करेंगे वह आपको निर्णय कर लेने का है। और किसी भी रूप में आप करेंगे अगर उससे मुल्क के मूल्य में, वेल्यूज़ में फर्क आता है, अगर बंधी हुई दृष्टियां खुलती हैं, अगर परतंत्र भाव स्वतंत्र होते हैं तो वह काम चल पड़ा, वह क्रांति चल पड़ी, वह क्रांति ने कदम भरने शुरू कर दिए। इस दिशा में थोड़ा सोचें, मिलें और क्या हो सकता है, क्या कर सकते हैं।

मैं तो बहुत अव्यावहारिक आदमी हूं, मुझे कुछ पता नहीं कि चीजें कैसे चलती हैं, मकान कैसे बनते हैं, दुकानें कैसे चलती हैं। आदमी कैसे कमाता है, क्या करता है मुझे कुछ पता नहीं है। लेकिन मुझे कुछ और बात पता है कि आदमी आकाश की तरफ कैसे देखता है, सूरज की तरफ कैसे देखता है, सौंदर्य की तरफ कैसे देखता है। लेकिन अकेला आकाश की तरफ देखने वाला आदमी बहुत काम का नहीं होता क्योंकि चलना जमीन पर होता है। और मुझे जमीन का कोई भी ठीक-ठीक पता नहीं है।

आपको पता होगा जमीन का। अगर आपके हाथ मेरे हाथ को मजबूत करते हैं तो वैसी बात बन जाएगी जैसी एक गांव एक बार में बनी। वह मैं बता दूं और अपनी बात पूरी करूं।

टॉकिंग टू वर्कर्स

एक सम्राट ने सारे देश के लोगों को भोजन पर निमंत्रण दिया। सारा देश चला जा रहा था भोजन के निमंत्रण के लिए। गांव-गांव से लोग टोलियां बांधकर चले जा रहे हैं, गांव खाली होते जा रहे हैं। एक सराय में एक अंधा और एक लंगड़ा बहुत दुखी और परेशान थे। वे कैसे जाएं? अंधे को दिखाई नहीं पड़ता, लंगड़ा चल नहीं सकता। और तब एक वृद्ध आदमी ने कहा, पागलो तुम दोनों साथ हो जाओ अन्यथा तुम यहीं बैठे रह जाओगे, तुम राजा के भोज में सम्मिलित नहीं हो सकोगे। उन्होंने कहा, हम कैसे साथ हो जाएं?

अंधा देख नहीं सकता लेकिन चल सकता है। लंगड़ा चल नहीं सकता लेकिन देख सकता है। बस, फिर वे दोनों साथ हो गए। वह अंधा चलने लगा और लंगड़ा उसके कंधों पर बैठ गया। और वे दोनों पहुंच गए। और भोज में सम्मिलित हो गए।

लेकिन एक दूसरी सराय में एक और मुश्किल हो गई उसका कोई पता ही नहीं है कि उसका कोई हल हुआ कि नहीं। वहां एक बहरा और एक गूंगा बैठे हुए थे। बहरा बोल सकता था, सुन नहीं सकता था। गूंगा सुन सकता था, बोल नहीं सकता था। और गूंगे ने सुन लिया था कि निमंत्रण आया है राजा का और जाना चाहिए। लेकिन वह अपने मित्र को कह नहीं सकता था कि चलना है। बहरा बोल सकता था, वह कह सकता था कि चलना है राजमहल लेकिन उसने सुना नहीं था कि निमंत्रण आया है। वे दोनों बैठे रहे, एक-दूसरे को खींचते रहे, एक-दूसरे को पकड़ते रहे क्योंकि वह गूंगा खींचता था कि चलो। वह बहरा कहता था, कहां खींचता है? चुपचाप बैठ। कहां जाना है? वे दोनों राजमहल के भोज में सम्मिलित नहीं हो सके।

अब पता नहीं मेरे साथ क्या होगा। हम अंधे और लंगड़े की तरह साथी बनेंगे कि गूंगे और बहरे की तरह? कुछ पता नहीं। अभी तो गूंगे और बहरे वाला मामला चल रहा है। देखिए यह कैसे चलता है! अगर यह अंधे और लंगड़े वाला मामला बन सकता है तो यात्रा हो सकती है, यह क्रांति राजमहल तक पहुंच सकती है।

बस ज्यादा तो मुझे कुछ कहना नहीं है। बाकी तो आपको सोचना है। बस अभी तो इतना सोचें और यहां जो मित्र हैं उनसे मिलें। दुर्लभ भाई के हाथ थोड़े मजबूत करें क्योंकि मैं देख सकता हूं, पैर मेरे पास बिलकुल नहीं है। अगर मेरे देखने का कोई उपयोग करना है तो आपको अपने पैर दे देने होंगे। अगर आप देते हैं तो क्रांति राजमहल तक पहुंच सकती है, इसमें कोई शक-शुबह नहीं है। मुझे राजमहल तक दिखाई पड़ रहा है रास्ता लेकिन पैर बिलकुल नहीं हैं मेरे पास। वह आपको सोच लेना है कि आपके पैरों का कोई उपयोग हो सकता है क्या। हो सकता हो तो मैं किसी भी पैर पर सवारी करने को तैयार हूं उसमें कोई कमजोर का, स्त्री का, पुरुष का, गरीब का, अमीर का कोई सवाल नहीं है; हिंदू, मुसलमान का कोई सवाल नहीं है। वह किसी का पैर हो, पैर होना चाहिए—वह चल सकता हो, बस इतना काफी है।

इतना ही कहना है, और तो अभी कुछ कहना नहीं है।

वर्कर्स केंप

22.1.68

मेरी आवाज़ अकेली नहीं है

देश को, समाज को, मनुष्य को—जैसा वह आज है—उसे देखकर जिस आदमी के हृदय में आंसू न भर जाते हों, वह आदमी या तो मर चुका है या मरने के करीब है। जो आदमी अभी जीवित है वह आज के देश की, आज के समाज की, आज के मनुष्य की दशा को देखकर रोता होगा; उसकी हंसी झूठी होगी; उसकी रातें उसके तकियों को उसकी आंखों के आंसुओं से गीला कर देती होंगी।

मुझे पता नहीं आपका, लेकिन मैं अंधकार में अक्सर रो लेता हूं। आदमी जैसा है उसे देखकर सिवाय रोने के और कुछ खयाल भी नहीं आता। लेकिन रोने से और कुछ भी नहीं हो सकता, कुछ करना जरूरी है। और अगर हम कुछ नहीं कर सके गिरते हुए चरित्र में, खोती हुई आत्मा के लिए...। पूरे देश की प्रतिभा नष्ट होती हो, पूरे प्राण बिखरते जाते हों, आदमी रोज

नीचे से नीचे उतरता जाता हो, और अगर हम कुछ न कर सके तो आने वाले भविष्य की अदालत में हम अगर अपराधी ठहराए जाएं तो कोई आश्चर्य नहीं होगा। हम अपराधी हैं।

हम आने वाले जीवन के लिए क्या छोड़ जाते हैं? हम आने वाले बच्चों और पीढ़ियों के लिए क्या निर्मित कर रहे हैं? हम उन्हें कौन सा जीवन दे रहे हैं? हम उन्हें कौन सा मार्ग दे रहे हैं? हम उन्हें कौन सा संकल्प दे रहे हैं? हम उन्हें कौनसी आशा दे रहे हैं? कौनसा भविष्य दे रहे हैं? कौनसी डेस्टिनी दे रहे हैं?—हम कुछ भी नहीं दे रहे हैं। हम कुछ बीमारियां दे रहे हैं, कुछ रुग्णताएं दे रहे हैं, कुछ पागलपन दे रहे हैं। हम बच्चों को विक्षिप्त बनाने की दिशा में अग्रसर कर रहे हैं।

इधर जितना ही यह सब मैं देखने लगा और देश के कोने-कोने में गया, और लाखों लोगों की आंखों में झांका तो एक भी आंख में मुझे आनंद की कोई झलक न मिली; और एक भी प्राण में मुझे कोई संगीत गूंजता हुआ सुनाई न पड़ा। और एक भी व्यक्ति मुझे ऐसा न मिला जिसे हम कह सकें कि जीवन को पाकर वह धन्य हो गया है। तो मेरी रातें बहुत दुख और अंधेरे और आंसुओं से भर गइ।

और इधर मुझे लगने लगा कि कुछ किया जाना जरूरी है। चुपचाप राह के किनारे खड़े होकर देखना खतरनाक है। और जो आदमी चुपचाप राह के किनारे खड़े होकर देख रहा है वह भी भागीदार है, वह भी हिस्सेदार है। अगर गलत हो रहा है तो जिम्मेदारी उसकी भी होगी। गए वे दिन जब संन्यासी दूर खड़े हो जाते थे और कहते थे कि जीवन से हमें क्या लेना-देना है। जीवन को नहीं बदला जा सका अगर तो उन्हीं संन्यासियों पर उसकी जिम्मेदारी चली जाएगी। वे बदल सकते थे जिंदगी को अगर वे कहते कि हमें जिंदगी से बहुत कुछ लेना-देना है, हम जिंदगी को गलत देखने को राजी नहीं हैं, हम जीएंगे तो जिंदगी को ठीक बनाने के प्रयास में जीएंगे।

इधर कोई संकल्प, कोई परमात्मा की आवाज जोर से मेरे मन में कहने लगी कि मुझसे जो बन सके थोड़ा-बहुत वह करना चाहिए। हो सकता है एक भी आदमी बदल सके तो बहुत बड़ी बात हो जाएगी। अंधेरे घर में एक भी दीया जल जाए तो बहुत बड़ी बात हो जाती है।

तो इस दिशा में थोड़ा सा सोचा कि कोई एक केंद्र हो और वहां मनुष्य के जीवन के परिवर्तन की कला, आर्ट ऑफ लिविंग पर, जीवन को बदलने के विज्ञान पर, जीवन को बदलने की दिशा में कुछ किया जा सके। बहुत कुछ किया जा सकता है। आदमी बिलकुल नया किया जा सकता है आदमी के भीतर बिलकुल नई चेतना को जन्म दिया जा सकता है क्योंकि मेरा खयाल यह है कि जब गलत हो सकता है आदमी तो ठीक भी हो सकता है। क्योंकि अगर वह ठीक न हो सकता हो तो फिर गलत भी नहीं हो सकता। जो आदमी बीमार हो सकता है वह स्वस्थ भी हो सकता है। अगर स्वस्थ न हो सकता हो तो फिर बीमारी की भी कोई संभावना नहीं हो सकती।

आदमी गलत है, सब भांति गलत है। वह ठीक भी हो सकता है। इस दिशा में मैं क्या कर सकता हूं? मेरी आवाज अकेली है लेकिन फिर बहुत मित्रों को पास पाकर मुझे ऐसा खयाल हुआ कि आवाज अकेली नहीं है, बहुत हृदयों की धड़कन उसके साथ हो सकती हैं। बहुत से लोग उसमें सहयोगी और साझीदार हो सकते हैं। और जीवन-क्रांति का एक पूरा आंदोलन, जीवन-क्रांति का एक पूरा विश्वविद्यालय और मुल्क के कोने-कोने तक आदमी को बदलने के लिए चुनौती और प्रेरणा देने वाली कोई हवा बहाई जा सकती है।

और उस हवा को बहाने में आपका भी साथ मिले उसके लिए मैं निवेदन और प्रार्थना करता हूं। वह साथ आपके पैसे का उतना नहीं है, पैसे का कोई भी बड़ा मूल्य नहीं है। वह आपके प्रेम का साथ है। अगर आप हृदय से साथ हैं तो पैसा उसके लिए बहुत इकट्ठा हो जाएगा—वह कभी सवाल ही नहीं है। और अगर आप हृदय से साथ नहीं है तो कितना ही पैसा इकट्ठा हो जाए उसका दो कौड़ी का कोई मूल्य नहीं है।

तो मैं आपके प्रेम के लिए, आपके साथ और शुभकामना के लिए प्रार्थना करता हूं। उस शुभकामना के पीछे और सब अपने आप चला आता है। अगर आपको लगता है, अगर आपके प्राणों में ऐसा प्रतीत होता है, कहीं हृदय में ऐसी आवाज उठती है कि देश के लिए, समाज के लिए, मनुष्य के लिए, कुछ किया जाना जरूरी है; कोई संकल्प पैदा होना जरूरी है, कोई आंदोलन, कोई हवा, मनुष्य की आत्मा को जगाने के लिए कोई तीव्र विचार देश के कोने-कोने तक गूंज जाना जरूरी

है—ऐसा प्रतीत होता है—तो ऐसा प्रतीत होने के बाद आप अगर दूर खड़े रहते हैं तो मनुष्य के उन हत्यारों में आपकी भी गिनती होगी जो मुल्क की हत्या किए जा रहे हैं। उसमें राजनीतिज्ञ सम्मिलित हैं, धर्मगुरु सम्मिलित हैं, और न मालूम किस-किस तरह के लोग सम्मिलित हैं। सब तरह के लोग सम्मिलित हैं मुल्क की हत्या करने में। उस मुल्क की बड़ी हत्या से बचाने के लिए आपका साथ, आपकी मैत्री, आपके प्रेम की मैं मांग करता हूं।

और यह मांग भीख नहीं है। यह मांग मैं अपना अधिकार मान लेता हूं। जिन्हें मैं प्रेम करता हूं उनसे मैं अधिकारपूर्वक मांग सकता हूं। और जो मैं मांगूंगा उसके लिए आप देंगे तो मैं आपको धन्यवाद भी देने वाला नहीं हूं, धन्यवाद आपको ही मुझे देना पड़ेगा कि मैं उसे लेने को राजी हो गया हूं।

पैसे का हिसाब-किताब तो दुर्लभजी भाई रखेंगे लेकिन मैं आपका हिसाब-किताब रखना चाहूंगा। तो अगर इस संकल्प में, इस महा संकल्प में, इस शुभ संकल्प में आपके मन की धड़कन साथ है तो मैं चाहूंगा कि आप अपने दोनों हाथ उठाकर मुझे बल दे दें कि आप मेरे साथ हैं। जो भी साथ हों वे अपने दोनों हाथ ऊपर उठा लें। वह उनके प्रेम का साथ है—न उनके पैसे का, न उनकी किसी और शक्ति का; उनके ह्रदय का और उनकी आत्मा का।

मैं आपको धन्यवाद देता हूं और प्रार्थना करता हूं कि आपने जो संकल्प जाहिर किया है वह संकल्प मेरा या आपका नहीं परमात्मा का होगा।

ओशो
जीवन क्रांति के सूत्र
वर्कर्स कैंप
16 अक्टूबर 1971

तीन चार बातें हैं। एक तो यह बिलकुल ठीक है कि मुझसे जो लोग मिलने आना चाहें उनकी कुछ व्यवस्था करनी चाहिए। इसके दो पहलू हो सकते हैं। एक तो सरलतम यह है कि सप्ताह में एक दिन तय कर लें उस दिन मैं दो घंटे बाहर ही बैठ जाऊंगा जिनको भी आना हो आ जाएं। कोई परमीशन का सवाल ही न रहे। एक दिन तय कर लें उस दिन जिसको भी आकर मिल जाना है मिल जाए, बैठना है मेरे पास बैठ जाए। उसके लिए कोई स्वीकृति किसी से लेने की जरूरत नहीं है।

दूसरा आपको एक लिस्ट बना लेनी चाहिए जिन लोगों से आप किसी तरह का भी काम या सहयोग लेते हैं। एक लिस्ट आपको यहां लक्ष्मी के पास छोड़ देनी चाहिए। उसमें आपको प्रिफरेंस मार्क लगा देने चाहिए कि इन व्यक्तियों को तो हर हालात में कभी भी कोई भी स्थिति हो इनका अगर आता है तो इन्हें तो मिलवाना ही है। तो नंबर एक, दो, तीन आपको ऐसी व्यवस्था कर लेनी है ताकि उसको सुविधा हो जाए। अन्यथा कठिनाई क्या होती है कि अगर दिन में बीस अपाइंटमेंट दे दिए हैं और किसी का फोन आया हो और समय नहीं है मिलने का तो उसको तो दुख होने वाला है। उसे इन बीस से कोई मतलब नहीं है, यहां समय से कोई मतलब नहीं है, मैं बीमार हूं इससे कोई मतलब नहीं है, किसी बात से कोई मतलब नहीं है, और उसकी कठिनाई भी ठीक है। अगर उसने छह महीने में एक दफा मिलने के लिए मांगा है, और उसको मिलने को न मिले। तो एक तो आप यहां एक सूची बना रखें और कठिनाई इसलिए खड़ी होती है कि हमारे मन में अगर जरा सा कोई कुछ काम करता है। तो उसका प्रतिकार लेने की तत्काल तैयारी होती है।

अगर किसी के मकान में ध्यान की क्लास चल रही हो तो इसका बदला भी मिलना चाहिए। ये ध्यान की क्लास कोई आनंद से नहीं चल रही है। अभी तक आपकी जो कठिनाई है और जिससे आप वर्कर्स खड़े नहीं कर पाते हैं वे केवल एक है और वह कठिनाई मेरे साथ अगर आप चलेंगे तो एक लिहाज से बनी रहेगी क्योंकि मैं निरंतर समझाता रहता हूं आपको की अहंकार छोड़ें, वह छूटता तो है नहीं। मेरी बात सुनकर आपको लगता है अहंकार का कोई हिसाब नहीं रखना है लेकिन आपको अहंकार का हिसाब रखना पड़े तो आपको यह कठिनाइयां न आएं जो आती हैं।

मेरी बात सुनकर आपको जम जाती है अहंकार का कोई हिसाब नहीं रखना लेकिन जिससे आप हजार रुपया लाते हैं। उसका आपको हजार रुपया का अहंकार पूरा करना चाहिए। नहीं आप करेंगे तो वह परेशानी खड़ी करेगा। यह मिलने-जुलने का इतना बड़ा सवाल नहीं है। वह दूसरे ढंग से करेगा। उसको बैठने के लिए जगह आगे चाहिए। वह मिलने आए तो उसको पहले मिलने का मौका मिलना चाहिए। वह जब चाहे उसको उस वक्त मिलने का मौका मिलना चाहिए।

अगर आप मेरी बात सुनकर हिसाब चलाएंगे तो आपको यह तकलीफ बढ़ती जाएगी। तो आप तो लोगों को देखकर व्यवस्था कर लें। मेरी बात देखकर व्यवस्था मत करें। आप तो लोगों को देख लें कि जिनसे आपने कुछ लिया है। जिनसे कोई सहायता मांगी है, जिनका आप कोई उपयोग कर रहे हैं। उनको आपको उनके अहंकार को तृप्त करने का इंतजाम करना ही होगा।

मैं किसी से अहंकार को तृप्त करने में सीधा सहयोगी नहीं हो सकता। क्योंकि जिस बीमारी से लड़ने के लिए मैं सारी ताकत लगाऊं। उसको मैं सहयोगी बनूं यह संभव नहीं है। तो वह आपकी बात है। वह आपको व्यवस्था कर लेनी चाहिए। किन-किन को कष्ट होता है उनके लिए इंतजाम कर दें। जो-जो आपके लिए सहायता पहुंचाते हैं उनको फिकर कर लें। प्रिफरेंस लिस्ट बना लें। वह सारा आप कर लें वह आपकी बात है। इसमें मुझसे कभी भी भूलकर बात नहीं करनी चाहिए। इस संबंध में। नहीं तो हमारी आकांक्षा यह होती है हमारी आकांक्षा यह है, हमारा रस यह है। सब जगह जहां साधु संतों का कुछ काम चलता है। वह सबका इंतजाम होता है पूरा का पूरा तो सबसे विनती है। अगर यहां आप आए हैं और यहां बीस लोग बैठे हैं और आपने कोई सहायता की है तो मुझे कहना चाहिए कि देसाई जी आप आगे आकर बैठ जाएं। वह मैं कभी कहता नहीं और आप भी नहीं कहते, वह मुसीबत की बात है। मैं कभी कहूंगा नहीं बल्कि देसाई जी आगे आते होंगे तो उनको रोकूंगा कि आप पीछे बैठो किसी और के पीछे बैठने से पर आपको थोड़ा फिकर करनी होगी। नहीं तो आपको कठिनाई रोज आएगी।

क्योंकि जब आप किसी से काम लेने जाते हैं। तब आप इस भूल में मत पड़िए कि वह आपके काम को पसंद करके पैसे दे रहा है या आपकी कोई सहायता कर रहा है या कोई भी तरह की सुविधा जुटा रहा है। ऐसा भी नहीं है कि वह आपके काम को प्रेम नहीं करता लेकिन वह नंबर दो है। नंबर एक है उसका अपना अहंकार। आपने उसके अहंकार को नंबर दो पर रखा तो आप झंझटें खड़ी कर देंगे। फिर वह पच्चीस बहाने खोजेंगे तो जो इसकी मूल जड़ में है वह इतना है। आपको सारी की सारी फिकर करनी चाहिए अगर आपको लोगों से सहायता लेती जानी है। मैं नहीं कहता कि आप लेते जाएं। यह भी नहीं कहता कि यह काम चलाना आपके लिए जरूरी है। यह भी नहीं कहता, लेकिन आपको अगर चलाना है तो आपको लोगों के मन को थोड़ी तृप्ति मिले ऐसी फिकर कर लेनी चाहिए।

आपकी मीटिंग हो तो उनको स्पेशल पास भिजवा दें। आपकी बैठक हो तो उनको स्पेशल निमंत्रण भिजवा दें। आपकी नई किताब छपे तो उनको स्पेशल कॉपी भिजवा दें। वह यहां मिलने आएं तो उनको विशेष सुविधा दें मिलने की और भी कुछ हो आप उनके लिए विशेष कर दें। तो आपकी इस संबंध की शिकायत हैं वे दूर चली जाएंगी। और कुछ ऐसा नहीं है कि बहुत लोग ऐसी शिकायतें करते हैं, ऐसा भी कुछ नहीं है। लेकिन अगर चार आदमी यह शिकायत करना शुरू कर दें तो वह बहुत जल्दी चालीस मालूम पड़ने लगती है। क्योंकि वह एक को कहते हैं, तीसरे को कहते हैं।

इधर जो भी आता है मुझे पूछकर उसको टाइम दें। अगर मुझे पूछकर टाइम देना है तो भी आपको दिक्कत आएगी। क्योंकि मैं जानता हूं यह आदमी फिजूल है। भले उसने आपको दस हजार रुपए दिए हों, वह आधा घंटा मेरा खराब करेगा तो मैं तो मना कर दूंगा। आप मुझे पूछे ही मत। आप यह सब इंतजाम बाहर ही कर लें। जिसको मिलाना हो मिला दें। जिसको न मिलाना हो न मिलाएं। इसमें मेरी सलाह मत मानें। क्योंकि मेरी सलाह अभी मुझसे ही पूछकर हो रहा है इसलिए आपको तकलीफ हो रही है। इसमें न तो लक्ष्मी का कसूर है न किसी और का कसूर है।

लक्ष्मी मुझसे पूछकर जाती है कि यह आदमी वक्त मांगता है इतना इसको देना है कि नहीं! मैं कहता हूं इतना वक्त नहीं देना है। पांच मिनट काफी हो जाएंगे। वह पांच मिनट में उसको तृप्ति नहीं मिलती। और पांच मिनट के लायक भी उसके

पास कोई बात नहीं होती। न उसे कुछ पूछना है न उसे कुछ करना है। तो अभी मुझसे पूछकर हो रहा है इसलिए तकलीफ हो रही है। मुझसे पूछना बिलकुल बंद कर दें। वह आप जिम्मा ले लें।

लक्ष्मी पूछे आपसे, मुझसे न पूछें तो आपको बिलकुल तकलीफ नहीं होगी। तब आप व्यवस्थित कर लेंगे। किसको मिलने देना है, किसको नहीं मिलने देना। और ऐसा है जिसने आपके लिए कुछ नहीं किया है, वह शिकायत नहीं करता फिरता। इसलिए वह आदमी मिल नहीं पाएगा तो कोई हर्जा, आपको तकलीफ नहीं होगी। चाहे उसको जरूरी रहा हो मिलना। लेकिन अगर वह नहीं मिल पाएगा तो कोई तकलीफ आपको सामने नहीं पड़ेगी। लेकिन एक गैर जरूरी आदमी अगर उसने आपके लिए कुछ किया है वह नहीं मिल पाएगा तो आपको तकलीफ पड़ेगी।

मुझसे पूछकर चलाइएगा तो तकलीफ जारी रहेगी। इसे बिलकुल ही आपको मैनेजमेंट पूरा अपनी तरफ से कर लेना चाहिए। तो जरा तकलीफ उसमें नहीं होगी। कहीं तकलीफ नहीं होगी। क्योंकि जो लोग परेशान कर सकते हैं; उनको तो मौका मिल जाता है। जो बेचारे कुछ नहीं कर सकते उनका कोई सवाल ही नहीं है। वह शिकायत भी करने नहीं आते। वह शिकायत करने की स्थिति में भी नहीं होते हैं। और आप उनकी शिकायत का कोई मूल्य भी नहीं मानेंगे। आपको भी शिकायत का मूल्य नहीं है। वह शिकायत के पीछे जो आदमी खड़ा है उसका मूल्य है। उसने यह किया था अब उसके पास दुबारा कैसे जाएंगे। उसने दस हजार रुपए दिए हैं; अब हम दुबारा कैसे उसके पास जाएं या जब दुबारा आप मांगने जाएंगे; वह सब शिकायतें रख देगा। लेकिन जिसने एक रुपया नहीं दिया। जिसको एक रुपया देने को नहीं है, न वह शिकायत रखने वाला है न उसकी शिकायत का कोई मूल्य है। न वह आपके पास आने वाला है, न आप उसके पास जाने वाले हैं। अड़चन केवल इतनी है तो, इसको आप व्यवस्थित कर लें। इसको मुझ पर छोड़े ही मत।

इसको मुझ पर छोड़ने में कठिनाई होगी। क्योंकि मैं देखता हूं एक आदमी दस दफे मिल गया। उससे मैं कह रहा हूं वह ध्यान करे वह करने को राजी नहीं है। वह ग्यारहवीं दफे फिर हाजिर है फोन करके कि मैं मिलने आना चाहता हूं। तो मैं तो उसको मना करूंगा। यह हिसाब मैं नहीं रख सकता हूं कि आपके लिए क्या इंतजाम किया है क्या नहीं किया है। यह कठिन जरा भी नहीं है। लेकिन इसको व्यवस्था मेरे साथ कुछ भी आप जोड़कर रखेंगे उसमें आपको अड़चन आएगी। और दो-चार लोग हैं जो सारी बात को चलाते हैं।

अगर मुझ पर छोड़ना है तो फिर आपको इतनी हिम्मत जुटानी चाहिए कि उनको कह देना चाहिए कि मुझसे पूछा जा रहा है। और अगर कोई भी जिम्मेवार है तो मैं जिम्मेवार हूं। उनको आपको कह देना चाहिए कि आप क्या करते हैं; इस वजह से आपको नहीं मिलाते। मिलना न मिलना मेरे ऊपर निर्भर है। मुझे लगता है कि मिलना इससे जरूरी है तो मैं इसी वक्त मिल लूंगा। मुझे लगता है गैर जरूरी है, फार्मल है अधिक तो फार्मल है मिलने वालों का आना, जरूरी बिलकुल नहीं है लेकिन उनको मिलना चाहिए। अगर उनको बिलकुल छूट दे दें न रोकें तो शिकायत नहीं आती। लेकिन मेरा पूरा समय खराब कर देते हैं। वह आपके लिए ज्यादा नुकसान की बात है।

जबलपुर में वैसा ही रखा हुआ था कि कोई रुकावट नहीं होती तो मैं सुबह से लेकर रात तक मिलता ही रहता था। जो आदमी आकर बैठ गया वह तीन घंटे भी बैठा हुआ है तो भी मैं बैठा हुआ हूं। फिर लोगों की आदतें बन गइ। उनको रोज नियमित आना था तो बंध गए लोग कि ठीक वह पांच बजे आने वाला है। वह पांच बजे रोज आकर बैठेगा ही। उनको भी कष्ट होता है, जो रोज मिलते हैं; उनको भी रोकने में कष्ट होता है। तकलीफ यह है कि मुझ पर मत छोड़ें जरा भी आप अपनी व्यवस्था कर लें और आप अपने परिचितों की लिस्ट बना लें और जिन-जिन को मिलवाना है उनको मिलवाएं, जिनको नहीं मिलवाना है उनको मत मिलवाएं सबको मिलवाना है सबको मिलवा दें। उसकी फिकर छोड़ दें वह उतना बड़ा सवाल नहीं है। वह बड़ा सवाल नहीं है आपको अड़चन परेशानी नहीं होनी चाहिए। अस्पष्ट। नहीं आप मेरी बात नहीं समझ रहे, मेरी बात नहीं समझ रहे। अस्पष्ट।

आपको अंदाज नहीं है उस डेढ़ घंटे में आप रोज उन्हीं लोगों को यहां बैठा हुआ पाएंगे। मेरा डेढ़ घंटा जरूर खराब करेंगे। वही लोग रोज यहां डेढ़ घंटा बैठेंगे। अस्पष्ट। वही लोग रोज डेढ़ घंटा बैठेंगे। मुझे अड़चन नहीं है उसमें भी वह डेढ़ घंटा निकाल सकते हैं। तो कोई उपयोग नहीं है और आप यह सोच रहे होंगे कि जो शिकायतें कर रहे हैं वह उसमें आएंगे तो

आप गलती में हैं। वह जितने शिकायत करने वाले हैं वे स्पेशल और प्राइवेट और अकेले में समय चाहते हैं। इसमें तो बेचारे वे आ जाएंगे जिनने आपसे कभी शिकायत नहीं की इस डेढ़ घंटे में यह भी मैं आपको बता दूं।

यह मेरे अनुभव से कह रहा हूं। इस डेढ़ घंटे में वे लोग आएंगे जिन्होंने कभी शिकायत नहीं की। जो वहां मीटिंग में सुन लेते थे वे यहां आकर बैठ जाएंगे। और जिन्होंने शिकायत की है उनको स्पेशल अलग वक्त चाहिए वह जारी रहेगा क्योंकि शिकायत का कारण मिलने का मामला नहीं है वह तो मीटिंग में ही मुझे सुन लेते हैं, कैंप में भी सुन लेते हैं। वह तो उनको पृथकता मिलनी चाहिए वह डेढ़ घंटे में नहीं होगा। अभी मैं देखता हूं न कैंप में दोपहर मिलने का वक्त देते हैं फिर भी मैं दिनभर मिलता हूं लोगों को उसके बावजूद भी क्योंकि वे खास जिनको आप आदमी कहते हैं, वे कहते हैं वह डेढ़ घंटा तो सब लोगों के लिए है। हमारे लिए अलग से दस मिनट रखिए। उस सब लोगों की भीड़ में वह नहीं आना चाहते। वे सब लोग कौन हैं, बड़ा मजा है। वह डेढ़ घंटा मेरा अलग ही खराब होता है और जिनको चाहिए था वक्त वे शिकायत करने वाले उनको सुबह चाहिए रात ग्यारह बजे तक मैं रोज बात कर रहा हूं कैंप में वह आपको खयाल में नहीं है। कि मीटिंग से उठकर मैं गया तो साढ़े दस बजे वहां पहुंचता हूं तो फिर तैयार हैं। सुबह की मीटिंग के बाद गया लोग वहां तैयार हैं लोग। सुबह आठ बजे से जो शुरू होता है वह रात ग्यारह बजे तक कंटिन्युअस चल रहा है। आपकी तीन मीटिंग चल ही रही हैं। मिलने का वक्त चल ही रहा है और फिर जिनको स्पेशल चाहिए उनका चल ही रहा है।

अब उसमें कठिनाइयां ऐसी हैं कि जिनके लिए आप वक्त निकालते हैं वह उसमें नहीं आने वाले हैं और मेरा जरूर वक्त लगवा देंगे आप उससे कुछ हल नहीं होगा। वह मैं करके देख लिया हूं उससे कुछ हल नहीं होगा। वह तकलीफ तो जो है वह आप नहीं पकड़ते हैं। तकलीफ मिलने-विलने की तकलीफ नहीं है। वह तकलीफ उनके अहंकार को तृप्ति मिलनी चाहिए। उसका आप इंतजाम करें मिलाने से कुछ हल नहीं होने वाला है। हां मिलाने में भी उसका इंतजाम कर लें तो उनको तृप्ति हो जाएगी। एक। और ऐसा न सोचें इससे मुझे कोई अड़चन होगी मेरा उतना ही टाइम लगेगा जितना अभी लगता है उससे ज्यादा नहीं लगेगा। इसलिए ऐसा मत सोचें कि मुझे अड़चन होगी अगर आप व्यवस्था लेते हैं। मुझे अड़चन नहीं होगी। फर्क इतना ही पड़ेगा अभी जिनको जरूरी हो उनके लिए समय मिलता है तब जिनके लिए जरूरी नहीं है उनको भी समय मिलेगा और कोई फरक नहीं पड़ता समय तो मेरा उतना ही जाना है। इसलिए उसमें दुख की बात नहीं है। समय उतना ही जाना है। और कष्ट तो ऐसे हैं जिसका हिसाब लगाना मुश्किल है। खाना खाने मैं बैठूंगा अगर नहीं रोकें तो दस-बीस लोग साथ में आ जाएंगे खाना भी नहीं खा पाऊंगा। अगर रोकें तो कष्ट होता है। डाक्टर मना कर गया कि खाना खाते वक्त यहां नहीं बैठने देना है। हिम्मतभाई यहां आकर बैठे थे वे जब भी आते हैं खाते वक्त ही आएंगे वह सब सुविधा से बातचीत हो जाती है। ये लोग खाना लेकर बाहर से आए इन्होंने देखा हिम्मतभाई बैठे हैं तो ये लोग दरवाजा अटका कर वापस ले गए कि ये चले जाएं तब, हिम्मतभाई लोगों को कहते फिरते हैं मैंने हाथ का इशारा कर दिया कि अभी मत लाओ अभी यहां बैठे हुए हैं। और वे सब जगह फोन करते फिरते हैं कि अब मैं वहां कदम नहीं रख सकता क्योंकि मुझे निकाला गया वुडलैंड से उनसे कोई बात ही नहीं हुई है। मगर हां ये लोग खाना वापिस ले गए ये उनके लिए भारी कष्ट की बात हो गई। अभी इस सबके लिए क्या करना? कष्ट बड़े अजीब हैं तो खाना भी मुश्किल हो जाता है बीस लोग यहां बैठे हैं तो कुछ न कुछ बात चलाएंगे। अगर आप भीतर आते हैं और मैं आपसे यह न कहूं कि आइए तो भी कष्ट होता है तो मैं खाना खाते अगर बीस लोगों को आइए भी कहता रहूं तो भी खाना मुश्किल हो जाता है। तकलीफें मिलने-विलने की नहीं हैं बड़ी क्योंकि मैं दिनभर मिल ही रहा हूं। और मांग बढ़ती चली जाती है मैं देखता क्या हूं अगर एक व्यक्ति को आज मिलने दिया तो वह आदमी मुझसे कहता है कि मुझे हर सात दिन में वक्त चाहिए सात दिन में वक्त देने लगें तो वह कहेगा मुझे तीन दिन में वक्त चाहिए। उसका कोई कसूर भी नहीं है। उसको अच्छा लगता है आनंदपूर्ण लगता है। लेकिन इसका इंतजाम कैसे करिएगा। इसलिए हुआ क्या इस मुल्क में इसका परिणाम यह हुआ था कि एक नई व्यवस्था में दर्शन की इस मुल्क ने निकाल ली थी इसमें कुछ बातचीत नहीं करनी है सिर्फ दर्शन करने हैं। मगर दर्शन करने वाले आदमी से कोई सहायता नहीं मिल सकती यह आप ध्यान रखना। दर्शन ही मिल सकता है अगर मुझे सहायता आपकी करनी है तो फिर मुझे आपको समय देना पड़ेगा और

अगर मुझे आपको समय देना है और सहायता करनी है तो हमें समय की च्वाइस भी करनी पड़ेगी, लोग भी चुनने पड़ेंगे, वक्त भी बांटना पड़ेगा। वह सब करना पड़ेगा और नहीं तो फिर दर्शन ही रह जाएगा आ जाइए दर्शन करके चले जाइए।

रमण महर्षि के पास यही हो रहा था। दिनभर खुला रहता था कोई तकलीफ नहीं थी। लेकिन सहायता क्या होने वाली है। बैठे हुए हैं, लेटे हुए हैं अपने तख्त पर और लोग सुबह से शाम तक दर्शन कर रहे हैं वे सो भी रहे हैं तो भी दर्शन चल रहा है तो करते रहें आप दर्शन।

अगर मेरी दृष्टि वैज्ञानिक है और मैं सोचता हूं जिसको सहायता पहुंचानी है जिसके लिए काम करना है उसके लिए जरूर वक्त होना चाहिए। लेकिन वक्त भी हमारी आदत और हैबिट नहीं बन जाना चाहिए क्योंकि रोज हमें उसकी जरूरत नहीं है जब जरूरत हो तब जरूर तो कोई अड़चन नहीं है। मेरे भी खयाल में है किसको जरूरत है तभी तो मैं भी खबर करवाता हूं कि फलां आदमी को बुलवा लेना कि वह मिल जाए आकर। क्योंकि मेरी नजर में है किसको जरूरत है क्या जरूरत है।

तो दो बातें हैं अगर मुझ पर छोड़ते हैं तो ये तकलीफ थोड़ी जारी रहेगी। और लक्ष्मी की जो सख्ती दिखाई पड़ती है। वह उसकी सख्ती नहीं है, वह मेरी व्यवस्था ही है। और जिस व्यक्ति को भी मना करना है वह बुरा लगने लगेगा और ऐसा नहीं है या हमें ऐसा लगता है कि वह प्रेम से बोले, वह बिलकुल प्रेम से बोले तो भी मना करेगा तो प्रेम दिखाई नहीं पड़ेगा और जिसको दिनभर वही करना है उसके भी प्रेम की सीमा है। हालांकि आपको नहीं लगता क्योंकि आप तो अकेले कर रहे हैं वह सुबह से दिनभर इसको मिलना है उसको मिलना है दिनभर उसको वही काम है। कोई घंटा मांगता है, कोई डेढ़ घंटा मांगता है कोई कहता है मुझे तो आधा घंटा चाहिए। अब उसको अगर मना करना है कोई मद्रास से आया हुआ है, कोई कलकत्ता से आया हुआ है वह कहता है मैं कलकत्ते से चला आ रहा हूं और मुझे एक घंटा चाहिए। उसको सुबह से शाम तक मना करना है और मना करने वाला आदमी एक तो बुरा लगेगा ही जिसको मना सुनाई पड़ेगी उसको वह कितना ही मीठा करे और फिर मेरा मानना यह है उसकी मिठास भी जल्दी मर जाएगी क्योंकि वह रूखा इनसान है। इधर मैं बहुत लोगों को वह काम देकर देख चुका हूं। रमणभाई के पास वह काम था तो वे सब लोगों को लगने लगे कि वे आदमी कठोर हैं। सरल आदमी चाहिए, प्रेमी आदमी चाहिए। जो शिकायत करते थे अनूप उनको वह काम दिया वे अनूप कठोर हो गए लोगों के लिए। अब अनूप लक्ष्मी की शिकायत करते हैं क्या किया जाए वह काम ऐसा है। मेरी अपनी समझ यह है कि व्यक्ति उतना बड़ा सवाल नहीं है क्योंकि काम ऐसे हैं वे काम व्यक्ति को उस तरह का ढाल लेते हैं। काम का भी नेचर होता है। जिसको दिनभर मना करने का, रोकने का काम है वह कठोर दिखने लगेगा। और कठोर हो भी जाएगा। वह सारा काम का ढांचा ऐसा है कि वह करेगा फिर भी मैं कहता हूं जो भी रहे उसको सम्हालना है कि वह जितने प्रेम से बन सके लेकिन मैं जानता हूं इससे शिकायत में कोई फरक नहीं पड़ता शिकायत जारी रहती है तो मैं यह मानता हूं इसको आप सबको कहना शुरू कर दें यह लक्ष्मी का कसूर नहीं है किसी का कसूर नहीं है। मेरी व्यवस्था है। मैं जिस व्यक्ति को समझता हूं उसको मैं तत्काल वक्त देता हूं जिसको नहीं समझता हूं नहीं देता हूं अगर मैं नहीं देता हूं वक्त तो समझना चाहिए कि तुम्हें वक्त की बिलकुल जरूरत नहीं है और तुम कुछ कर नहीं रहे हो या तो इतनी हिम्मत जुटा लें और या फिर यह मुझ पर छोड़ो ही मत या अपना इंतजाम कर लें। लक्ष्मी से बेहतर कोई सम्हाल सकता हो उसको लगता है यह मीठा सम्हाल लेगा उसको बिठा दो उसमें कोई अड़चन नहीं है। एक व्यक्ति को सिर्फ इसलिए रख दें कि वह सिर्फ इतना ही काम करेगा लोगों को टाइम देने का नहीं देने का और तब आपको दो महीने अंदाज हो जाएगा कि उस आदमी की शिकायत आनी शुरू हो गई। कठिनाई जो है वह इकॉनामिकल है। इकॉनामिकल का मेरा मतलब यह है कि समय कम है लोग ज्यादा हैं इसलिए कठिनाई है। सारी कठिनाई इकॉनामिकल है। दिन में कितने लोगों को आप मिला सकते हैं। प्रचार आप बढ़ाते जाएंगे, लोग बढ़ते जाएंगे मिलने वाले उत्सुक लोग बढ़ते जाएंगे। मैं अकेला बना रहूंगा। समय की सीमा उतनी ही रहेगी काम बढ़ाते आप चले जाएंगे तकलीफ बढ़ने वाली है। तकलीफें बढ़ती नहीं अगर यहां कोई फीस हो तो तकलीफ नहीं बढ़ेगी जितने लोग बढ़ते जाएं उतनी मिलने की फीस बढ़ाते चले जाएं तो आपको कभी तकलीफ नहीं आएगी। वह तो तकलीफ आप समझ नहीं रहे हैं।

मुझे दो सौ आदमी सुनते थे तब भी मेरे पास टाइम इतना ही था। बीस हजार आदमी सुनते हैं तब भी मेरे पास टाइम उतना ही है। आप चाहते क्या हैं ये बीस हजार आदमी मिलना चाहेंगे अब। मेरा टाइम तो नहीं बढ़ गया बीस गुना वह तो

उतना का उतना है। तो इन सबको आप कैसे स्पष्ट करिएगा। तो दो ही रास्ते हैं या तो आप इसमें चुनाव कर लें कि जो हमारा कार्यकर्ता है, आर्थिक व्यवस्था किसी भी तरह का चुनाव कर लें कोई भी चुनाव कर लें कि भाई मैं इस कैटेगरी के लोगों को मिलाएंगे बाकी को नहीं मिलाएंगे। तो वह कैटेगरी आपकी तृप्त हो जाएगी। एक रास्ता यह है।

दूसरा रास्ता यह है कि मुक्त ही छोड़ दें जिससे मैं मिलना चाहूंगा मिलूंगा नहीं तो नहीं मिलूंगा तो भी एक कैटेगरी हो जाएगी। लेकिन मैं मानता हूं मेरी कैटेगरी मतलब की होगी। आपकी कैटेगरी मतलब की नहीं होगी। इसको इस तरह प्रचारित करना शुरू करें कि ये आपके ऊपर निर्भर नहीं है कि आपने चाहा मिलना तो मिल लूंगा मैं। अस्पष्ट। अपने वर्कर्स मित्रों को खयाल में नहीं है जब भी कोई शिकायत करे भविष्य में तो इसकी दोनों तीनों चारों अखबारों में खबर निकाल दें सारे मित्रों को खबर कर दें कि आपने मिलना चाहा इससे जरूरी नहीं कि मैं मिलूंगा। मेरी इच्छा पर निर्भर है मुझे लगेगा कि आपको बिलकुल वक्त है जरूरी और आपको मिलने के बिना नहीं चलेगा और आपके लिए कोई सहायता पहुंचानी जरूरी है तो मैं मिलूंगा। इसलिए मुझ पर छोड़ दें। आप इनफार्म कर दें यहां फोन से और मुझ पर छोड़ दें। तकलीफ तो यह होती है मैं मिलना चाहता हूं और कोई रोक रहा है। तकलीफ यह है मुझे चिट्ठियां आती हैं वे यह हैं कि आप मिलने को तैयार हैं हम मिलना चाहते हैं बीच में कोई रोक रहा है। बीच में कोई नहीं रोक रहा है। यह उनको साफ कर दें। इसमें अड़चन कम होगी।

दूसरी बात यह ध्यान में रख लें कि जिन मित्रों से आप सहायता लेने जाते हैं। उनको सहायता लेते वक्त भी आप कह दें कि अनकंडीशनल है। सहायता लेने के बाद भी उनको बता दें कि इसमें कोई कंडीशन नहीं है। मुझ पर कोई कंडीशन नहीं है। ये आप अपने प्रेम से दे रहे हैं। अगर वह आदमी कहता है मैं प्रेम से नहीं दे रहा उसको नोट कर लें कि हम नोट कर लेना चाहते हैं कि आप प्रेम से अनकंडीशनल देते हैं कि आप सशर्त कंडीशनल देते हैं कि आपकी कोई कंडीशन पीछे होगी ताकि हम उसको पूरी करें ताकि आपको कोई आपको कोई अतृप्ति न हो। आप नोट कर लें कि इससे हमने दस हजार रुपए लिए हैं ये आदमी कहता है मेरी कंडीशन है जब मैं मिलना चाहूंगा तब मुझे मिलवाना तो कंडीशन पूरी करें। नानकंडीशनल है सहायता तो नोट कर लें कि नानकंडीशनल है तब वह शिकायत नहीं कर सकेगा दुबारा आपकी वैसी कोई व्यवस्था कर लें क्योंकि वह तो बढ़ती जाएगी अंदाज तुम्हें नहीं है। वह संख्या बढ़ती जाएगी लोगों की। हिंदुस्तान के बाहर काम पहुंचेगा वहां से लोग आएंगे हिंदुस्तान के कोने-कोने में काम पहुंचेगा वहां से लोग आएंगे तो तुम्हें च्वाइस तो करनी ही पड़ेगी किसी तरह की चाहे धन से करो, चाहे साधना के हिसाब से करो, चाहे बुद्धिमत्ता के हिसाब से करो कोई हिसाब से कोई कैटेगरी बनानी पड़ेगी कि इनको मिलने देना है। नहीं तो असंभव हो जाएगा और मेरी मान्यता यह है इसके दो ही उपाय हैं या तो मुझ पर छोड़ दें सो बीच में किसी पर जिम्मा मत डालें। वह जो भी आदमी बीच में है वह मुझे ही रिप्रेजेंट कर रहा है बस मेरी खबर दे रहा है आपको उससे ज्यादा उसका कोई अस्तित्व नहीं है। तो इसमें अड़चन क्या होती है इसमें अड़चन यह होती है कि मित्रों की भी यह इच्छा होती है कि दोष आया है वह खुद ले लें मुझ पर न डालें उससे भी अड़चन होती है। नहीं वह दोष मुझ पर ही डाल दें आपको कम अड़चन होगी लंबे अर्से में साल दो साल में वह साफ हो जाएगा मैं आदमी ऐसा हूं मिलना होता है तो मिलता हूं नहीं मिलना होता नहीं मिलता। आपकी तरफ से निर्णय नहीं होता मिलने का निर्णय मिलने का मेरी तरफ से होता है।

गुरजिएफ था तो महीनों क्या सालों भी नहीं मिले और ऐसा भी नहीं था कि न मिले बुला ले टाइम पर टाइम दे दे और न मिले कि आप हजार मील से यात्रा करके आए हैं उसने टाइम दिया है खबर दी है कि ठीक पांच बजे फलां जगह आकर मिल जाओ पांच बजे आप बैठे हैं और वह खबर भेज देगा कि नहीं मिल सकूंगा जाहिर हो गया दो-चार साल में लोगों को अगर आपको जाना है इतनी लंबी यात्रा आप अपनी रिस्क पर कर रहे हैं जरूरी नहीं है उसका मिलना फिर भी। ऐसा भी नहीं कि एकाध आदमी का पब्लिक मीटिंग रखेगा और पब्लिक मीटिंग में एनवक्त पर जाकर कह देगा कि आज नहीं बोलूंगा। शिकायत खतम हो गई थोड़े दिन में लोगों को जाहिर हो गया कि ठीक है इस आदमी को सुनना हो तो यह समझ कर जाओ शायद ये बोले या न बोले आए न आए।

अभी तकलीफ क्या होती है आप मुझे बचाने के लिए अपने ऊपर ले लेते हैं। कहीं कह देंगे तरू की गलती हो गई हो होगी उसने ऐसा कह दिया होगा, देसाईजी की गलती हो गई होगी उन्होंने ऐसा कह दिया। वह तो बहुत प्रेमपूर्ण हैं बीच में

किसी ने बाधा डाल दी होगी ऐसा मत कहना। कहना वे ही ऐसे आदमी हैं गलत सही जैसे भी हैं वे जिसको मिलना है मिलते हैं नहीं मिलना नहीं मिलते। और जिससे सहायता लेते हैं उससे कंडीशन की बात कर लें कि आपकी कोई कंडीशन हो तो हम याद रख सकें ताकि किसी को शिकायत न हो। अगर कंडीशनल नहीं नानकंडीशनल है तो हम याद कर लें कि आपकी कोई शिकायत नहीं होगी। एक।

दूसरी बात व्यवस्था का जो सवाल है उसमें दो-तीन बातें खयाल में ले लेनी चाहिए। एक तो मेरा खयाल यह है—इलेक्शन या बहुत ज्यादा कांस्ट्यिूशन के बहुत पक्ष में मैं नहीं हूं क्योंकि मेरा मानना नहीं है कि इलेक्शन से कोई काम हो सकता है हां इलेक्शन हो सकता है और बड़ा काम दिखाई पड़े क्योंकि इलेक्शन कोई छोटा काम नहीं है। मगर काम नहीं है हां मजा आएगा। और वर्कर्स में रस पैदा हो जाएगा। आगे-पीछे ऊपर-नीचे होने की संभावना हो जाएगी लेकिन उससे काम नहीं होगा। मैं नहीं मानता हूं उससे काम होगा। दुनिया में सबसे कम काम करना हो किसी भी व्यवस्था को तो उसको इलेक्शन पर खड़ा करना चाहिए। क्योंकि इलेक्शन ही इतना बड़ा काम है फिर और कोई काम बचता ही नहीं। मैं नहीं मानता मैं तो मानता हूं कि नामीनेशन अगर काम करना है। हां लोगों को तृप्त करना है, सबको तृप्त करना है तो इलेक्शन बिलकुल ठीक है। काम दूसरी बात है सबको तृप्त करना है तो ठीक है आपके हजार मेम्बर्स हैं इलेक्शन करिए सबको रस आएगा, सब बैठक में भी आएंगे क्योंकि हराने जिताने का, पार्टी बनाने का, गुट बनाने का सब उपाय शुरू हो जाएगा। लेकिन वह सब काम-वाम नहीं होगा हां काम करना है तो उससे काम नहीं होगा। और सारी शकल पालिटिकल हो जाती है भीतरी अर्थों में। तो मैं तो कोई इलेक्शन के पक्ष में नहीं हूं। मैं तो सीधा नामीनेशन के पक्ष में हूं। वह झंझट में मैं नहीं डालना चाहूंगा न कांपीटिशन होने का अर्थ समझता हूं न कुछ और। ये तो जहां काम नहीं करना है वहां ये सब चीजें बड़ी अच्छी हैं। काम नहीं करना है और काम करते हुए काफी दिखाई पड़ना है तो लाइंस है, रोटरी है काम-वाम कुछ नहीं करना है मगर गवर्नर है और डिप्टीगवर्नर है और प्रेसीडेंट है सेकंड प्रेसीडेंट है, और चल रहा है और भारी, भारी काम में लगे हुए हैं सब और काम-वाम कुछ नहीं करना है, काम-वाम से क्या लेना-देना है तो उसके तो मैं रस में नहीं हूं। ये मैं जरूर जानता हूं कि कांस्टिट्यूशन बनाए, व्यवस्था बनाए। व्यवस्था के अनुसार काम हो सके इसकी चिंता करें लेकिन इलेक्शन को खड़ा करने का कोई मतलब नहीं भूल जाएं।

दूसरी बात यह है कि काम के बंटवारे की जरूर चिंता करें। लेकिन हम सब यहां कहते हैं कि बंटवारा होना चाहिए। लेकिन बंटवारा किसका कर दिया जाए। कौन व्यक्ति कौन सा काम करने में उत्सुक है। उसको आफर करना चाहिए जहां इलेक्शन न हों वहां आफर करना चाहिए। आनंदभाई को लगता है कि यह काम मैं ईश्वर बाबू से बेहतर कर सकूंगा तो कमेटी के सामने उनको आफर कर देना चाहिए। ईश्वर बाबू यह काम कर रहे हैं इससे बेहतर मैं कर सकूंगा। तो मैं मानता हूं कि वे काम इनको दे दिए जाएं। कमेटी उनको दे दे, छह महीने के लिए दे दे। कि भई ठीक है ईश्वर बाबू से बेहतर तुम छह महीने करके दिखाओ अगर तुम यह बेहतर करते हो तो हम फिकर छोड़ दें क्योंकि ईश्वर बाबू भी इसलिए कर रहे हैं कि वह बेहतर हो सके। मेरा मानना है कि इलेक्शन की जगह आफर ज्यादा योग्य और ज्यादा बुद्धिमानी की बात है। इलेक्शन तो बड़ी उलटी चीज है। आप कोशिश करते हैं कि आप चुने जाएं और फिर भी ऐसा दिखाते हैं कि आपको पद वगैरह में कोई उत्सुकता नहीं है वह तो आप काम के लिए हैं। आफर बिलकुल उलटा है। आफर बिलकुल उलटा है। आप किसी को कहने नहीं जा रहे हैं आप सिर्फ आफर करते हैं अपना कि मैं इस काम को फलां व्यक्ति से बेहतर कर सकता हूं। ज्यादा मेरे पास सुविधा है ज्यादा इस संबंध का मेरा ज्ञान है। ज्यादा मेरे पास समय है तो यह काम मुझे छह महीने के लिए एक्सपेरीमेंटली कमेटी दे देगा। आपकी कमेटी उसको नियुक्त कर दे कि ठीक है। यह एक्सपेरीमेंट के लिए छह महीने करो। अगर वह बेहतर करता है तो ठीक है काम के अगर बेहतर नहीं करता तो वापस लौटा दो। आफर करने की फिकर करें इसको मैं ज्यादा योग्य और धार्मिक बात समझता हूं और ज्यादा विनम्र। दृष्टि उलटी है। दृष्टि उलटी है कि एक आदमी खड़ा होकर कहे कि मैं लहरू से ज्यादा बेहतर काम कर सकता हूं। मगर इसको मैं ज्यादा विनम्र मानता हूं कि आदमी सीधी सी बात कह रहा है कि ठीक है। अभी क्या करते हैं आप उलटा करते हैं। अभी आप यह नहीं कहते कि मैं बेहतर कर सकता हूं। अभी आप कहते हैं कि बाबूभाई ठीक नहीं कर रहे हैं। कहना आप यही चाहते हैं कि मैं ज्यादा समझदार आदमी हूं, ज्यादा योग्य आदमी

हूं मैं इसको उससे बेहतर कर सकता हूं। लेकिन कहते अभी आप हैं, बाबूभाई ठीक नहीं करते। इससे कोई हल नहीं होगा। इससे कोई हल नहीं होगा। ज्यादा ईमानदारी की बात यह है कि आप कहें कि यह काम को मैं बेहतर कर सकता हूं यह काम को मुझ पर सौंप कर देखा जाए। एक एक्सपेरीमेंट कर लिया जाए। तो आपको निंदा करने से बचने की सुविधा हो जाए। और आप कर सकते हैं कि नहीं इसका भी आपको दो दफे सोचना पड़े क्योंकि कौन नहीं कर रहा है इसको कहीं किसी को सोचने की जरूरत नहीं है। फलां आदमी ठीक नहीं कर रहा है इसे कहने में क्या दिक्कत है। लेकिन मैं ठीक करूंगा तो आपको हजार दफे सोचना पड़े और सोच-विचार से कदम उठाना पड़े। तो अगर यह कमेटी में रोज-रोज की आपको एक-दूसरे की चिंता बंद करनी है तो एक ही उपाय है कि आप आफर अपने आनंद के लिए कर दें कि यह काम मैं करके दिखाऊंगा। छह महीने के लिए आपके पास समय है आप करके दिखाएं। कोई अड़चन नहीं काम बराबर बांट दिया जाए जो भी आफर दें उसको काम बांट दिया जाए। और एक बात ध्यान रखें कि जब भी कोई, कोई भी काम करता है तो काम के दो हिस्से हैं। एक काम की तकलीफें हैं वह हमारे खयाल में नहीं होतीं। एक काम की भूलें हैं वह हमारे खयाल में होती हैं। एक काम का परिणाम है वह भी हमारे खयाल में नहीं होता। तो जब भी आप सोचने बैठेंगे कि मैं कहने जा रहा हूं कि यह काम बाबू भाई से छोड़कर हर्षद को दे दें तो मैं सब सोच लूं कि इस काम की तकलीफें कितनी हैं, इस काम की व्यवस्था कैसी होने वाली है, इसके परिणाम कितने हो रहे हैं जो अभी कर रहा है व्यक्ति वह क्या कर रहा है पूरी बात समझ लें तभी आप आफर कर पाएंगे नहीं तो नहीं कर पाएंगे। तो यह अपने भीतर से बात ही छोड़ दें। हमेशा आफर लेकर आ जाएं कि यह काम मैं करना चाहता हूं तो उसको काम मिलना चाहिए। और मैं तैयार हूं उसके लिए कोई इलेक्शन की जरूरत नहीं है जो आदमी खुद कह रहा है अब इससे बड़ा कोई और क्या गवाही हो सकती है वह आदमी करेगा ही। कोई पच्चीस आदमी वोट करें तब पता चले कि आप योग्य हैं। आप पच्चीस को समझाने जाएं कि मैं योग्य आदमी हूं इस सबकी क्या जरूरत है खड़े होकर आप कह दें कि मेरी यह योग्यता है यह काम मैं करना चाहता हूं यह काम मुझे सौंपा जाए। आप ट्रस्ट करें पार्ट काम सौंपा जाए कुछ भी आपको दिया जाए आप काम कर डिवीजन कर लें। तो हम यह बातचीत तो करते हैं कि डिवीजन होना चाहिए, डिवीजन जरूर होना चाहिए। लेकिन किसको काम सौंप दिया जाए। इसके लिए आफर करना जरूरी है। एक नया प्रयोग हो जाए कीमती है और मैं मानता हूं कि जहां भी मित्र इकट्ठे हों वहां इलेक्शन बुरी बात है। इलेक्शन तो दुश्मनी खड़ी करती है, मित्रता तोड़ती है। आफर की बात है, सीधा आफर करती है और हिम्मत की बात भी है। और आपको जीना भी पड़ता है पीछे आपको कमेटी पूछेगी भी कि भई छह महीने में जो-जो शिकायतें आपने की थीं कौन सी तोड़ता है काम कौन सा करता है। काम जरूर बांट दें।

इधर दूसरा मेरा खयाल यह है कि जो भी एक व्यक्ति काम करता है कोई उस काम को बांटना जहां तक बने न करो। नए काम हमारे पास बहुत हैं जो शुरू करें काम की कोई कमी नहीं। समझ लें कि अभी ईश्वर बाबू पब्लिकेशन का पूरा काम देख रहे हैं। लष्करीजी ने अपनी तरफ से आफर दिया है कि पब्लिकेशन के काम का मेरा अनुभव है तो वह मैं देख लूंगा। पर मेरा मानना ऐसा है कि लष्करीजी को हम एक अलग डिवीजन एन.एस.आई. का पब्लिकेशन एक अलग से शुरू करवा दें नव संन्यास अंतर्राष्ट्रीय का अलग पब्लिकेशन शुरू कर दें। किताबें तो इतनी पब्लिश होने को पड़ी हैं कि वह आप दस अलग पब्लिकेशन भी करें तो भी पूरी नहीं होंगी। वह ईश्वर बाबू जो सम्हालते हैं सम्हाल लें। लष्करी जी को हम एक काम दे दें वे एन.एस.आई. का पब्लिकेशन शुरू कर दें।

तो दो बातें होंगी—नहीं तो एक आदमी आफर भी करे, पुराना आदमी का काम भी छूट जाए और यह आदमी न कर पाए तो कल सब उलझन में पड़ जाएगा। और छह महीने जिस आदमी को आपने काम के बाहर रखा वह छह महीने के बाद लेना चाहे न लेना चाहे वह उसके सोचने की बात है। नए अपने पास काम इतने हैं कि जो हम उसके ऊपर डिवीजन करने की तब जरूरत पड़ी थी जब काम न बचें क्योंकि काम बहुत हैं। नया पब्लिकेशन शुरू करें। अभी एक संन्यास का विचार ये लोग करते हैं अंग्रेजी में पत्रिका शुरू कर दें। नई कमेटी बनाए ईश्वर बाबू पर क्यों थोपते जाते हैं। और बड़ा मजा यह है कि हम कहते भी हैं कि काम बांटना है और सब काम उन्हीं पर थोपते जाते हैं कि जो दो-चार लोग काम करते हैं उन्हीं पर थोपते चले जाते हैं। संन्यास निकालना है उसकी एक नई कमेटी बना लें। अभी साधुतारा पर परमानेंट कैम्पस बनाना है उसकी नई

कमेटी बना लें। नई कमेटी चुकता सम्हाले उस पर पुराने से उसको कुछ लेना-देना ही नहीं इससे अलग चार लोग कर दें वे जानें।

बंबई में मैं चाहता हूं कि आज नहीं कल हमें कोई न कोई छोटा-मोटा कैम्पस बनाना चाहिए। बस्ती के बाहर तो वीक एंड में कम से कम दो दिन आप मेरे साथ रह सकें। एक अलग कमेटी को इनफार्म कर दें वह उसको सम्हालेगी। वह उसको कुछ लेना-देना नहीं उसके पृष्ठ ही अलग बना दें आपके बीच से ही। उसके सारे सेक्रेटरी सब बना दें पर सब अपाइंट करें कोई इलेक्शन का वहां भी सवाल नहीं है। एक परमानेंट कैम्पस के लिए बंबई में एक कमेटी बनाए वह उनको काम सौंप दें। अगर वह कहते हैं कि अभी हिसाब-किताब की व्यवस्था नहीं होती तो वह अपनी कमेटी में हिसाब-किताब की अगर कल व्यवस्था करके बात दें तो हम ईश्वर बाबू से कहें कि यह भी इन पर छोड़ दें यह व्यवस्था ठीक कर लेंगे।

नए काम की दिशाएं खोजनी हैं और काम बहुत है। काम के कम का कोई सवाल नहीं है। धीरे-धीरे लेंग्वेज के पब्लिकेशन को अलग कर दें। अब जैसे मराठी का पब्लिकेशन है वह अटक गया है। अलग कमेटी कर लें वह अलग अपना फंड रेज करे वह जाने उसमें ईश्वर बाबू कोई बाधा देने नहीं जाएंगे बीच में। वह अपना फंड रेज करे अपने फंड व्यवस्थित करे सारा फंड आखिर काम में तो एक आ जाने वाला है तो ठीक है वह अपना अलग करता रहे। मराठी का अलग कर दें, धीरे से गुजराती का अलग कर दें, हिंदी का अलग कर दें, अंग्रेजी का अलग कर दें। धीरे-धीरे बांट दें। अभी तक की सारी तकलीफ यह है लेकिन लेने को कोई तैयार नहीं होता है काम और जो शिकायतें आपके पास आती हैं कि कोई कहता है कि हिसाब-किताब ठीक नहीं है। कोई कुछ कहता है कोई कुछ कहता है। ये मेरा मानना है कि यह आप फैलाते हैं सब जगह। क्योंकि बाजार में एक आदमी कैसे कह देगा कि हिसाब-किताब आपका ठीक नहीं है। और आपसे कह देगा और आप चुपचाप सुन लेते कि हां और कह देते कि ठीक नहीं है। बड़ी हैरानी की बात है। अगर हिसाब-किताब ठीक नहीं है तो उसके लिए ईश्वर बाबू अकेले जिम्मेवार नहीं है, आप भी जिम्मेवार हैं। और अगर आपने जोर से कह दिया होता कि नहीं हिसाब-किताब बिलकुल ठीक है यह आप कैसी बात कर रहे हैं तो वह आदमी शांत हो गया होता। लेकिन आप कहते हैं हां यह बात ठीक है कि हिसाब-किताब ठीक नहीं है। और हिसाब-किताब में क्या ठीक नहीं है उसमें कुछ कर नहीं लेते हैं उसमें कुछ व्यवस्थित कर लें उसमें कौन सा बड़ा मामला है उसमें कोई भी बड़ा मामला नहीं है। वह जो दूसरा आदमी कह देता है कि हिसाब-किताब ठीक नहीं है वह इसलिए कह रहा है कि वह जो आप मांगने आए हैं वह आपको नहीं देना चाहता। और आप भी हां भर देते हैं वह भी इसलिए कि लौटकर आपको भी यह नहीं कहना पड़ता कि मैं नहीं ला पाया हूं पैसा। हिसाब-किताब ही ठीक नहीं है आप शांत हो गए। वह भी सुलझ गया उसको देने से बचाव हो गया आपको लाना था वह जिम्मेदारी भी आपकी खतम हो गई। ये मैं दो-तीन साल से सुनता हूं यह ठीक नहीं दो-तीन साल क्या जबसे—दस साल से वही बात है। वह क्यों ठीक नहीं हो जाता उसका कोई कारण समझ में नहीं आता। उसमें कोई अड़चन नहीं है। अड़चन कुल इतनी है कि पैसे की आपके पास कमी है तो अगर हिसाब-किताब बिलकुल ठीक रखें तो काम आप बिलकुल नहीं कर पाएंगे।

अब ऐसा मामला है कि अगर आप ठीक व्यवस्थित आदमी को सारा हिसाब-किताब सौंप दें। बसंती भाई बिलकुल व्यवस्थित हैं हिसाब में उनको आप सौंप दें। तो काम में आपको मुश्किल हो जाएगी। क्योंकि आप करेंगे तो अव्यवस्था होगी और अगर बसंती भाई को व्यवस्था रखनी है तो फिर काम रुकेगा। अगर आपके पास एक पैसा नहीं है बैंक में और ईश्वर बाबू चालीस हजार रुपए की किताबें छपने भेज रहे हैं तो बसंती भाई को रोकना चाहिए कि यह पैसा कहां है नहीं तो ये चालीस हजार आएंगे कहां से। अब वह किसी से पेपर ले रहे हैं उसको कह रहे हैं महीने भर में पैसा देंगे और तीन महीने तक घूम-फिर कर रहे हैं। किसी से छपवा रहे हैं उसको चार महीने तक घूम-फिर कर रहे हैं। इससे लेकर कहीं उसको दे दिया। कहीं उससे लेकर इसको दे दिया वह हिसाब ठीक हो नहीं सकता है।

अगर आपको हिसाब ठीक करना है तो आपको फंड्स रेज करने पड़ेंगे। नहीं तो आप कभी ठीक नहीं कर पाएंगे। आपके पास इतना फंड होना चाहिए कि हिसाब से आप कर सकें। दस हजार रुपए आपको किसी को देना है तो हिसाब से आप दे सकें। अब वह दस हजार तो हैं ही नहीं आपके पास तो दो उपाय हैं या तो गैर हिसाब से काम चले और या काम बंद हो

जाए हिसाब साफ रहे। क्योंकि अगर आपके पास बैंक में रुपया नहीं है तो जो हिसाब वाला है वह आदमी कहेगा कि ईश्वर बाबू ये चैक आप कैसे काट रहे हैं वह चैक काटते रहते हैं वह लौटता रहता है। हालांकि वह चैक नहीं कटना चाहिए क्योंकि पैसा तो है नहीं आपके पास अब वे कहते हैं जब तक लौटेगा आएगा तब तक पंद्रह दिन का वक्त मिलेगा तब तक कुछ करेंगे। मगर यह है तो गलत वह मैं भी जानता हूं कि यह गलत है और जिसके पास से लौटेगा वह कहेगा मामला क्या है। हमसे कह कर जाते हो वक्त पर देंगे और यह पैसा तो आता नहीं। अगर इसको वक्त पर देना है तो आपके पास है ही नहीं और तब आप अगर हिसाब से चलते हैं तो आप कोई काम नहीं कर पाएंगे। जब पैसा आएगा तब काम होगा और वह होगा नहीं। अब उन्होंने जो किया हुआ है वह बिलकुल गोलमाल है गोलमाल इसलिए है कि उसके सिवाय कोई उपाय नहीं तो हम सब उनकी आलोचना कर लेते हैं कि भई ये व्यवस्थित होना चाहिए काम। वह भी हिम्मत करके नहीं कहते कि यह हो नहीं सकता। वे भी कहते हैं कि होना चाहिए क्योंकि हम सबको मानना है कि हिसाब का ठीक होना बड़ी ऊंची बात है सबका मानना है ऐसा वह बिलकुल ठीक होना चाहिए ठीक बात है। उसको कोई इनकार भी नहीं करता यह सभी वक्त पर जरूरी नहीं है कि ठीक बात हो। हिसाब का ठीक होना बहुत लक्जरी है। आपके पास जरूरत से ज्यादा पैसा हो तो हिसाब ठीक हो सकता। जरूरत ज्यादा हो और पैसा कम हो तो आपका हिसाब कभी ठीक नहीं हो सकता। उसमें थोड़ी-बहुत भूल-चूक चलेगी तो अभी पैसा बिलकुल नहीं है और काम भारी है। उन पर पैसा एक नहीं है लेकिन ईश्वर बाबू कहते हैं दो लाख का साहित्य बेचा इस साल। और पैसा एक नहीं है तो वह दो लाख का साहित्य आता कैसे। एक किताब छपवाते हैं उसको बेचते हैं उसी में से पैसा निकालकर दूसरी छपवाने की कोशिश में लगते हैं। कभी मीटिंग का पैसा किताब में डालते हैं, कभी कैंप का पैसा किताब में डाल देते हैं। आप कहते हैं कि सब व्यवस्थित होना चाहिए। किताब का पैसा किताब में जाना चाहिए, कैंप का कैंप में जाना चाहिए। मीटिंग का मीटिंग में जाना चाहिए। अब वह जा सकता है लेकिन तब मीटिंग होना भी मुश्किल, कैंप होना भी मुश्किल, और किताब छपना भी मुश्किल। जो तकलीफ है कुल जमा इतनी है कि आपके पास फंड कम हैं और काम रोज बढ़ते जाने वाले हैं। अब कोई सौ पब्लिकेशन हो गए हैं और यह कुछ भी नहीं है अभी लहरू के पास कोई पांच हजार घंटों के रिकार्ड पड़े हुए हैं जोकि पब्लिश शायद हो ही नहीं पाएंगे। क्योंकि रोज मैं बोलता जाऊंगा वह पब्लिश आप करेंगे तो पीछे के वे पचास हजार पेज आप पब्लिश नहीं कर सकेंगे। अगर आपको हिसाब ठीक करना है तो फंड रेज करें। लेकिन आप फंड रेज करने से बचने के लिए हिसाब ठीक नहीं है यह बात ठीक कर दें। यह कभी होने वाला नहीं है और यह काम ऐसा नहीं है कि आपका फंड कभी भी काम से ज्यादा हो जाएगा इसकी कभी भ्रांति में ही न पड़ना। आप कितना ही फंड करो वह कम पड़ेगा तो यह सारी स्थिति समझ कर आपको जो भी काम करने वाला है उसके डिफेंस में होना चाहिए बाहर तो डिफेंस में न होकर आप उसके प्रचारक बनते हैं नहीं हिसाब कुछ ठीक नहीं है। यह मैं मान ही नहीं सकता यह पता कैसे चलता है किसी को कि हिसाब ठीक नहीं है। और फिर भी ऐसा नहीं है कि वे हिसाब नहीं देते साल भर के बाद तो वे हिसाब दे देते हैं। आडिट हो जाता है सारा नहीं तो आपका ट्रस्ट नहीं चल सकता है। तो वह जो आडिट रिर्पोट है वह आप सबके हाथ में पकड़ा दें जो भी कहता है हिसाब ठीक नहीं है और आपको सच में ही रत्ती-पाई का हिसाब ठीक रखना है तो फंड इतने रेज कर दें कि रत्ती-पाई का हिसाब ठीक हो जाए। और मैं मानता हूं जितना आप फंड रेज कर लें ईश्वर बाबू को मैं बिलकुल छुटकारा दे दूं सारा काम आपको सौंप दूं। और अगर अभी सौंप दूं तो सारा काम बंद हो जाएगा यह मैं जानता हूं हिसाब आपका बिलकुल साफ रहेगा तो मेरे लिए हिसाब से काम बड़ी चीज है। और आपको ऐसा लगता है कि कभी हिसाब बहुत बड़ी चीज है। हिसाब-बिसाब का क्या मतलब है वह हो गया या नहीं हो गया क्या होने वाला है। आखिर हिसाब में हिसाब की कोई कीमत नहीं है। काम का सवाल है कि वह काम कैसे बढ़ा हो। तो सब जो मैं आपकी बात सुनता हूं उससे मुझे जो हैरानी होती है वह यह होती है कि वह सारी एप्रोच निगेटिव है पाजिटिव नहीं। क्या-क्या गलती हो रही है उसकी बहुत चिंता मत करिए जहां जितना बढ़ा काम होता है वहां उतनी बड़ी गलती होती है।

अगर अमेरिका में किसी आदमी को सबसे ज्यादा गालियां मिलती हैं तो वे कोई चोर या बदमाश को नहीं मिलतीं वह राष्ट्रपति को मिलेंगी, निकसन को मिलेंगी। वह कोई हत्यारे को नहीं मिलने वाली। अगर सबसे ज्यादा बदनामी होती है तो वह राष्ट्रपति की होने वाली है वह कोई बदमाशों की नहीं होने वाली बदनामी। इस खयाल में मत रहना कि बदनामी बदमाश

की होती है। बदमाश को कौन पूछता है। बदनामी करने की जरूरत किसको है तो उसका कारण यह होता है जो काम करने जाएगा वह झंझटों में तो खड़ा होने ही वाला है। प्राब्लम्स खड़े ही हुए हैं किसी की बपौती थोड़े ही है। प्राब्लम्स तो चारों तरफ खड़े ही हुए हैं। अब कोई वियतनाम निकसन थोड़े पैदा कर लेता है। वियतनाम तो खड़ा ही हुआ है पहले ही से अब वह निकसन थकेगा उसमें वह कुछ भी करेगा थकेगा क्योंकि दुनिया डिवाइडेड है अगर वह अ करेगा तो ब उसके खिलाफ है। वह ब करेगा तो अ उसके खिलाफ है। इस भ्रांति में पड़ना ही नहीं चाहिए किसी व्यक्ति को कि वह कोई आलोचना से बच जाएगा। काम करना है तो आलोचना होगी। एक ही उपाय है आलोचना से बचना हो तो कुछ भी नहीं करना फिर उनकी कोई आलोचना नहीं कर सकता। तो इस प्रसन्नता में कभी नहीं रहना चाहिए मेरी कोई आलोचना नहीं कर रहा है उसका मतलब केवल इतना है कि आप बिलकुल बेकार आदमी हैं और कोई मतलब नहीं है। यानी कोई आलोचना योग्य पा ही नहीं रहा है मामला ही कुछ पकड़ में नहीं आ रहा कि आप कुछ हिलाएं-डुलाएं तो कुछ गलती हो कुछ भूल-चूक हो। तो पाजिटिव थोड़ी सी फिकर करें। और काम के नए आयाम खोजें। यह भी मैं जानता हूं कि आलोचना और उस सबके पीछे एक और बुनियादी साइकॉलाजीकल कारण है और वह यह है कि जब एक व्यक्ति दो व्यक्ति काम करते हैं तो बाकी व्यक्ति फ्रस्ट्रेड होते हैं उनके पास कोई काम नहीं होता। काम करने की भी सहज आकांक्षा है। स्वाभाविक है अच्छी है। अब अगर ईश्वर बाबू सारा काम कर रहे हैं तो ठीक है आनंदभाई क्या करें, बाबूभाई क्या करें ठीक है वे कर रहे हैं तो उनके पास आलोचना बची वह भी काम है पर वे करेंगे क्या तो मेरा मानना यह है कि उनको भी काम होना चाहिए अगर उनको भी आलोचना से रोकना है, व्यर्थ के काम से रोकना है तो सार्थक काम सबके पास क्रियेटिव फोर्स है। वे खड़े रहेंगे तो बेकार हो जाएंगे। तो काम को बढ़ाएं नए डायमेंशंस में। एक कमेटी बनाएं जो कि बंबई में अलग कमेटी बना दें उसका जिम्मा इस काम करनेवाले ग्रुप पर नहीं होगा। आपके बीच से बनाएं, बाहर से नए मित्र लाएं। एक कमेटी बनाएं जोकि एक परमानेंट कैंपस बंबई में, बंबई के बाहर सोचे कि कम से कम वीकएंड में दो दिन सौ-दो सौ लोग मेरे पास रह सकें नियमित रूप से सदा तो ये आपका मिलने-जुलने का भाव भी कम हो जाएगा, यह मामला भी हल हो जाएगा थोड़ा ध्यान में भी जा सकेंगे। एक कमेटी बनाएं और आफर कर दें कि कौन उस कमेटी में जाता है। वह जाने उससे इसका कुछ लेना-देना नहीं इस फंड से उसका कुछ लेना-देना नहीं । नया फंड उसको खड़ा करना है, नया ट्रस्ट बनाना है, नई उसको फिकर करनी है और उसकी सारी व्यवस्था उसको करनी है जो-जो कमी उसे इसमें दिख रही हों वे उसे उसमें दिखा देनी है कि ये कमी यहां नहीं रहेंगी। एक साधुतारा कैंपस बनाना है तो अभी लाख रुपए की उन्होंने बातचीत की लाख रुपए के प्रामिस भी हो गए तो वह मैंने जयंतीभाई से कहा कि आप ही सम्हाल लें। जयंतीभाई उसमें रहें, लष्करी जी उसमें रहें, मृदुला बहन ने आफर किया है वे तीन उसमें रहें और दो-चार जो उनको कोआपरेट करवाना है उनको करवा लें या जो आफर करें वे उनमें सम्मिलित हो जाएं। वे एक अलग कैंपस अपना खड़ा कर लें एक यहां बंबई के बाहर एक कैंपस खड़ा कर लें जो वीक एंड में काम आ सके। अब बाहर से बहुत मित्र आने शुरू हुए हैं आपके पास जरूरत पड़ेगी कि एक कम से कम एक गेस्ट हाउस जैसा चाहे उसमें पैड रख देना बाहर से जो लोग आते हैं उनके लिए इंतजाम कर लें। दस-बीस लोग यहां रुकेंगे नियमित रुके रहेंगे और वे आपको पीछे बहुत काम पड़ जाने वाले हैं तो एक गेस्ट हाउस बना लेना पड़ेगा उसमें कोई दस-पंद्रह सोलह लोग रुक सकें। सब गेस्ट हाउस में रुक सकें खाना वे अपना कहीं भी खा लेंगे। वहां जो रुकने का है वे आपको किराया दे देंगे तो व्यवस्था उसकी एक कमेटी उसके लिए बना दें। वे अलग अपनी व्यवस्था करें। पब्लिकेशन में एन.एस.आई. का पब्लिकेशन अलग कर दें। एक नया पब्लिकेशन शुरू कर दें उसका सारा फंड, उसकी सारी व्यवस्था, अलग कमेटी करे। केंद्र बेचेगा केंद्र को कमीशन मिल जाएगा आप केंद्र का कुछ बेचेंगे आपको केंद्र कमीशन दे देगा। बेचने का सारा काम चाहें आप केंद्र से ले लें लेकिन पब्लिकेशन का और सारी व्यवस्था का और सारे फंड का अपना इंतजाम कर लें उसमें आप व्यवस्थित हिसाब बना लें ये इस तरह हो। यहां वुडलेंड के खर्च की व्यवस्था का सारा इंतजाम उसकी अलग कमेटी बना दें वह एक आदमी पर क्यों थोपते चले जाएं। उसकी अलग कमेटी बना दें वे लोग समझें और दो-चार-छह महीने में सारी कमेटियां मिल लें सारे लोग आपस में बातचीत कर लें कौन क्या कर रहा है। क्या एक-दूसरे को कोऑपरेशन दे सकते हैं कि नहीं दे सकते हैं। पुराने काम को बाद में बांटना शुरू करें। नए काम को जैसे मराठी का प्रोडक्शन दे डालें एक कमेटी

अलग कर दें। अंग्रेजी का पब्लिकेशन अभी नया है उसको अलग कर लें उसमें कोई अड़चन नहीं है। धीरे-धीरे सब लेंग्वेज का बांट डालें। अब काम तो इतने हैं जैसे कि मैं समझता हूं कि आपको टेपरिकार्डर्स बेचने शुरू करने चाहिए वे भी इन्हीं पर थोपते जाते हैं उसका परिणाम क्या होता है कि इतना काम हो जाता है मैं जो कभी देखता हूं कि ईश्वर बाबू सब कुछ कैसे करते हैं। हां वह जरा हैरानी का काम है वे भी अपनी डायरी में कहीं भी नोट कर लेते हैं और सब घोलमेल रहता है और उसमें वे करते रहते हैं। उसमें पच्चीस चीजें और हैं। उसमें पत्र व्यवहार भी लिखते रहते हैं जब तक कि गुणा उन पर बिलकुल सवार नहीं हो जाती। तो कठिनाई होने वाली है और दैनिय मामला हो क्योंकि इतना ज्यादा सिर पर बोझ हो जाता है और फिर आलोचना के सिवाय कुछ मिलता ही नहीं। टेप की एक अलग व्यवस्था कर लें एक अलग कमेटी बना दें क्योंकि टेप धीरे-धीरे आपकी किताबों जैसे ही बिकने लगेंगे। एक अलग पूरा डिपार्टमेंट चाहिए जो टेप ही बनाए और प्रोफेशनल ढंग से बना कर बेचे तैयार रहने चाहिए अगर पचास रुपए में बाजार में टेप मिलता है तो आप साठ रुपए में दें। दस रुपए आपको प्रोफेशनल टेप करने का और सारी व्यवस्था का खर्च है बिलकुल तैयार होना चाहिए ठीक अपनी किताब की दुकान जहां किताब बिकती है वहीं अपने टेप भी बिकने चाहिए। हर लेक्चर की सीरीज करके। क्योंकि मैं अगर कम जाऊंगा बाहर और मैं कम जाऊंगा तो आपका टेप का सेल जोर से बढ़ जाएगा। जगह-जगह टेपरिकार्ड पर लोग सुन रहे हैं। हैरानी की बात है अभी मुझे अमृतसर में खबर दी कि बराबर तीन सौ-साढ़े तीन सौ लोग नियमित हर रविवार को इकट्ठा होकर सुनते हैं। अभी आपकी महावीर वाणी को पांच-पांच सौ, छह-छह सौ लोगों ने पूरे हाल में बैठकर के सुना तो वे सुनने लगेंगे। टेप का एक अलग डिपार्टमेंट कर दें वह वे जानें। उसमें कोई रिकार्ड बनाने चाहिए। अब तो लांग प्ले रिकार्ड है कोई चालीस मिनट की स्पीच उसमें आ सकती है। जो लोग टेप नहीं भी खरीद सकते वे भी डेढ़ सौ रुपए का ग्रामोफोन तो खरीद ही सकते हैं किसी भी गांव में। लांग प्ले रिकार्डस् बनाने चाहिए उसका एक अलग इंतजाम कर लेना चाहिए। इस सबको बांटना चाहिए। अब संन्यासी आपके पास हैं उनको अलग काम बांट देना चाहिए वे अपना अलग काम करें। इसको अगर बांटें तो ये लाखों लोगों तक पहुंच जाएगा और बांटें तो जितने लोग कर सकते हैं उन सबकी केपेसिटी का उपयोग हो जाएगा। और विस्तार से हम सोच सकते हैं। अब यहां तो सारे मित्र हैं वे, वे जो भी करते हैं अपना काम उस काम से इस काम के लिए क्या लाभ पहुंच सकता है उसके लिए विचार कर सकते हैं। क्योंकि मेरा मानना ऐसा है कि अगर हमें कोई बड़ा काम करना हो तो उसके परमानेंट सोर्सेज होने चाहिए। रोज-रोज मांगने वाले काम बहुत देर तक नहीं चल पाते। अब सारे लोग इतने समझदार हैं सोच-विचार वाले हैं, धंधे हैं, व्यवसाय हैं, इंडस्ट्रीज है उससे थोड़ा सोचना चाहिए। चाहें तो गवरमेंट से लोन लेकर स्माल स्केल इंडस्ट्रीज डाल दें। संन्यासी मैं आपको दे दूंगा जो सिर्फ खाने और कपड़े पर पूरा का पूरा काम कर लेंगे। आपके लिए दस बीस पच्चीस हजार रुपए महीने की स्थाई व्यवस्था हो जाए। कोई एक्सपोर्ट का काम हो वह आप सोच लें बंबई से न हो सके कहीं बाहर के बीस संन्यासी को बिठा कर वह काम करवा देंगे। आपके पास स्थाई सोर्ससेज हो जाने चाहिए। किताब का सोर्स इतना बढ़ा है कि मैं नहीं मानता कि आप अगर सिर्फ उसका ही पूरा उपयोग कर पाएं तो आपको कोई किसी से मांगने की जरूरत नहीं रह जाए। किसी से मांगने की जरूरत नहीं रह जाए। कोई कठिनाई नहीं कि हिंदुस्तान में हम पांच हजार ऐसे ग्राहक नाम नोट कर लें रजिस्टर में जिनको किताब निकालते ही प्रेस से चली जानी चाहिए सीधी की सीधी पांच हजार लोग कोई प्राब्लम नहीं है। प्राब्लम ही नहीं है सिर्फ एप्रोच की बात है कि हम पांच हजार ग्राहक पूरे मुल्क में ऐसे तय कर लें कि जिनका नाम रजिस्टर्ड है सीधा प्रेस से किताब छपेगी और वी.पी. से उनको चली जाएगी और वे बहुत खुश होंगे क्योंकि इतने परेशान हैं कि लिखते हैं किताब नहीं मिलती, पूछते हैं महीनों लग जाते हैं। उनको खुशी होगी कि सीधा प्रेस से उनको किताब मिल जाए नई किताब छपे। आप दस हजार से कम कोई किताब मत छापें, पांच हजार किताबें सीधी प्रेस से चली जाएं। आपका सारा पैसा लौट आता है अब पांच हजार आप चुपचाप बेचते रहें जिसमें कोई प्राब्लम नहीं है। चौगने आप दाम रखते हैं किताब के अगर पांच हजार की किताब आप छापते हैं तो सारा चालीस परसेंट आप कमीशन दें तो भी आपको उसमें पांच हजार बचने हैं। सारा खर्च उसमें निकाल लें। अगर आप साल में बीस किताब छापते हैं तो आपको लाख रुपया तो ऐसे सहज आ जाता है। उसमें कोई सवाल नहीं है। ये बीस किताबें

धीरे-धीरे सब लेंग्वेज में छाप लेनी हैं। और इसका जो मैं मानता हूं बाबूभाई इसको ठीक प्रोफेशनल ढंग से किताब को व्यवस्था देनी है। इसका ठीक एडवरटाइजमेंट पर खर्च करें जैसे आप अपनी और कोई चीज को पैदावार पर खर्च करते हैं।

और आपके खयाल में नहीं है कि क्योंकि हिंदुस्तान में कोई किताब आप छापकर तीन हजार आप पांच साल में भी नहीं बेच सकते कोई बड़े से बड़ा पब्लिशर नहीं बेच पाता। और आप तीन हजार किताब दो महीने में बेच लेते हैं। और अव्यवस्थित है सब। मैं बड़े से बड़े पब्लिशर से बात किया वे कहते हैं ये मुश्किल मामला है क्योंकि तीन हजार किताब बिक जाए पांच साल में एक एडीशन तो बड़ी बात है। हिंदुस्तान में पढ़ता कौन है। आप दो महीने में बेच लेते हैं आपकी किताब छपकर प्रेस से आती है और आपको महीने भर में लिखना शुरू करना पड़ता है कि ये किताब खतम हो गई। पांच-सात किताबें हमेशा आपकी आउट आफ प्रिंट पड़ी रहती हैं। और उनके ग्राहक रोज लिख रहे हैं आपको कि हमें किताब चाहिए। इसको तो बिलकुल प्रोफेशनल कर देना चाहिए जैसा कि पब्लिशर करता है। उसको बिलकुल प्रोफेशनल ढंग से व्यवस्थित कर देना चाहिए। आपको हर हालात में पांच लाख रुपए साल के किताब से मिल सकते हैं। अगर आप उसको प्रोफेशनली ढंग से व्यवस्थित करें। फिर उसका ठीक एडवरटाइजमेंट करें, उसके एडवरटाइजमेंट पर खर्च करें क्योंकि आज की जो सारी की सारी व्यवस्था है आप अपने धंधे में जैसा सोच कर चलते हैं ठीक वैसा उसके लिए सोचें। अगर आप पांच हजार किताब पर खर्च करते हैं तो आपको हजार रुपए किताब के विज्ञापन पर खर्च करने चाहिए और सारे मंथ में विज्ञापन चलते ही रहने चाहिए कोई भी कारण नहीं है कि दस लाख रुपए की किताब आप हर साल में न बेचें कोई कारण ही नहीं है बिना किसी दिक्कत के। और जल्दी बाहर के लेंग्वेजेज में किताबें पब्लिश हो जाएंगी तो आपको खयाल में नहीं है कि हिंदुस्तान से अगर कोई भी चीज ज्यादा से ज्यादा पैसे पश्चिम से ला सकती हो वह किताब है क्योंकि पश्चिम में कोई भी किताब पचास रुपए से कम में तो मुश्किल हो जाती है दो सौ ढाई सौ पन्ने की किताब है चालीस-पचास रुपए दाम हो जाएंगे। आप उसको यहां इतने सस्ते में छाप लेते हैं क्योंकि लेबर का तो कोई चार्ज ही नहीं है। अगर एक दफा पश्चिम में आप किताब के लिए मार्केट खोज लेते हैं तो आप फिकर छोड़ दें कि कौन आपसे क्या कह रहा है आपको जाने की जरूरत नहीं वे आपके पास देने आए तो भी आप सोचें कि लेना है इससे नहीं लेना है और पश्चिम में मार्केट खोजने में कोई कठिनाई नहीं है क्योंकि वहां बिलकुल सड़ी और व्यर्थ की किताबें हैं। धर्म के नाम पर पश्चिम में छप रही हैं। जिनका कोई भी मूल्य नहीं है उनका कोई मतलब नहीं है। इसको थोड़ा व्यवस्थित करें और इस सबकी कमेटी बांट दें जैसे इसमें बाहर का मामला है एक अलग कमेटी बना दें कि हिंदुस्तान से बाहर के लिए जो भी पब्लिकेशन का इंतजाम करना हो वह कमेटी करेगी इसको कहां थोपना इनके ऊपर वह कांटेक्ट बनाए वहां पब्लिशर को लिखे अब हमारे संन्यासी भी बाहर हैं वे आपको सहयोगी हो जाएंगे किताब छापे यहां पश्चिम में बेचें। पांच रुपए में यहां वह किताब बनती है पश्चिम में वह प्रचास रुपए में बिकती है। और मैं तो मानता हूं न केवल यह कि आपका अगर ठीक से व्यवस्थित हो जाए तो कुछ किताबें ऐसी जो मेरी भी नहीं हैं लेकिन मैं मानता हूं कि साधक के लिए उपयोगी हो जाएंगी उनको भी हम छापें और पश्चिम में बेचें। वह भी आपके लिए काफी उपयोग की बात हो जाए। पश्चिम में तो टेप मजे से बिक सकते हैं कोई अड़चन नहीं है।

इसके लिए अलग कमेटी बना लें हिंदुस्तान के बाहर के काम के लिए अलग कमेटी बना लें जो उसकी ही फिकर में लगे और उसकी लिखना-पढ़ना करस्पांडेंस वह सारा उपयोग करे। इस सबके लिए आफर कर दें एक दफा मीटिंग बुला लें सारे मित्रों की और आफर कर लें कि कौन इस-इस काम को लेना चाहता है वह ले ले और उसको सम्हाले। एक दफा जब आप अपनी प्रतिभा दिखा पाएं किसी नए काम में तो मैं किसी पुराने काम को भी ईश्वर बाबू को कहूं कि ये काम फलां व्यक्ति को सौंप दें तो कोई अड़चन तो पीछे कोई है नहीं सौंपने में। लेकिन अभी अड़चन यह है कि किसको सौंप देना है और जिसको सौंप देंगे वह कर पाएगा कि नहीं कर पाएगा। जहां तक मेरा मानना है कि करने वाला कुछ न कुछ करने में लग जाता है बहुत जल्दी। तो कुछ भी करने के लिए चुनना और उसमें लग जाना। जब कैंप का मामला है वह अलग कमेटी रख लें कैंप की कोई बात ही नहीं उठना चाहिए वह कमेटी सम्हालेगी। कहीं भी कैंप हों कुछ भी हो और चूंकि अब तो मैं यहां ज्यादा देर रुकूंगा तो बंबई के पास ज्यादा से ज्यादा कैंप लेने का है। पीछे तो मेरा खयाल है कि अपने को साल में तीन या चार कैंप फिक्सड कर लेना चाहिए तारीख भी स्थान भी सदा के लिए तो लोगों को पता ही है कि उस तारीख में फलां जगह कैंप होगा

ही। लोग बिना पूछताछ के भी आ जाएंगे तो अड़चन नहीं होगी। वह एक कमेटी अलग कर दें। मीटिंग्स आपको रखनी पड़ती हैं साल में चार-छह उसकी अलग कमेटी कर दें और फिर उसमें दखलअंदाजी बिलकुल नहीं। और हर कमेटी अपने फंड की फिकर करें। कठिनाई वहां से शुरू होती है कि आप काम भी चाहते हैं साथ में उसका फंड भी ले लेना चाहते हैं। तब आप अड़चन में डाल देते हैं और अड़चन में पड़ जाते हैं और इसलिए वह काम नहीं छूट रहा है जो कठिनाई मुझे समझ में आती है ईश्वर बाबू को आप सब कहते हैं कि काम बांट दो उनकी तकलीफ यह है कि काम बांट देने में कौन सी तकलीफ है लेकिन काम के पीछे आप फौरन कहते हैं कि इसके लिए फंड वह तो है नहीं देने को तो फंड नहीं बांटते इसलिए काम भी नहीं बंटता फिर वह काम भी अटक जाएगा। जैसे अगर आपको कहें कि आप मराठी की एक पब्लिकेशन आप सम्हाल लें तो आप कहते हैं कि इसका फंड दो फंड उन पर है ही नहीं वह फंड कहां से देना इसलिए वह बात वहीं अटक कर रह जाएगी। काम ले लें फंड की बात न करें फंड अपना व्यवस्थित करना शुरू करें और फिर जिनके पास आप जाते हैं उनको कहें कि अब यह काम मैं कर रहा हूं, और फंड मैं और आपको सारा हिसाब मैं पूरा बनाकर दूंगा। इसलिए अभी हम शर्त से लेते हैं आपसे कि हिसाब आपको पूरा दिया जाएगा इसका कोई हिसाब गड़बड़ नहीं होगा और मैं भी मानता हूं कि आप हिम्मत से कह भी सकते हैं जब काम आपके हाथ में है काम ही आपके हाथ में नहीं है हिसाब कोई रखता है काम कोई रखता है पैसा लेने आप जाते हैं वह आप क्या जवाब दें अब वह कुछ पता भी नहीं होता उसमें मुझे कोई बहुत अड़चन नहीं दिखाई पड़ती है। और बढ़ते काम में अड़चनें बिलकुल स्वाभाविक हैं और काम इतना बड़ा हो जाएगा कि दो साल में आपकी कल्पना में नहीं हो सकता उतना बड़ा हो जाएगा। तो छोटी-छोटी बातों में मत पड़ें रहें उसके बड़े होने में लग जाएं। मुझे पाजिटिव ऐसी कोई झंझट नहीं पड़ती है कि कोई ऊंचाव है या कोई कठिन है। तो इस पर भी थोड़ा सा सोचें।